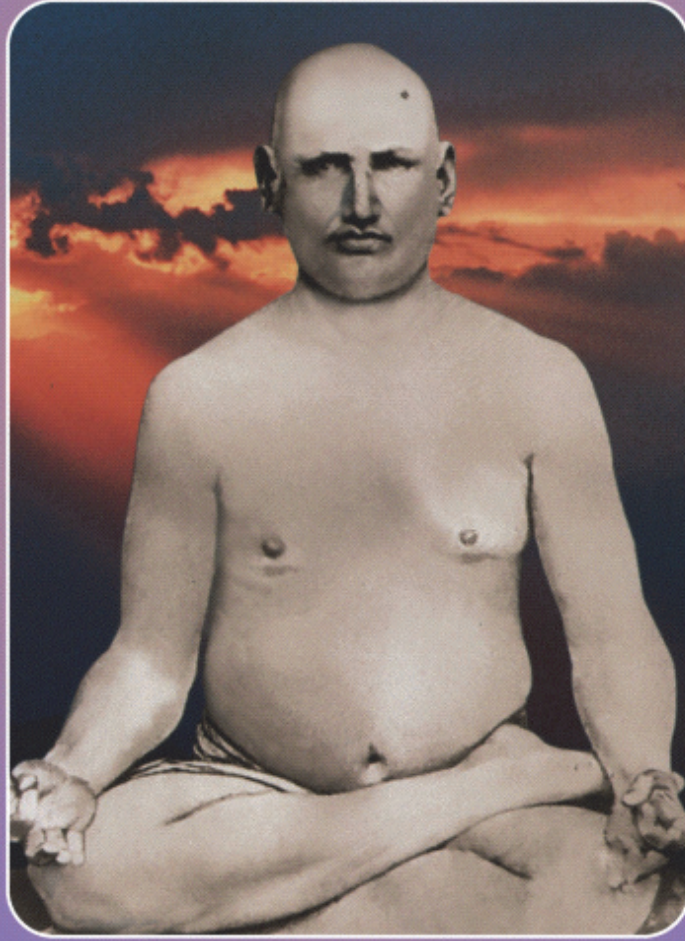


• वर्ष ६५ • अंक ९ • मूल्य ₹२०

मई ( प्रथम ) २०२३



# पाक्षिक पशुपकारिणी



महर्षि दयानन्द सरस्वती

॥ ओ३म् ॥



अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय टंकारा के  
पूर्व आचार्य, वैदिक विद्वान् स्मृतिशेष

**आचार्य विद्यादेव जी**

के निधन पर परोपकारिणी सभा की ओर से

**हार्दिक श्रद्धाञ्जलि**

१० अप्रैल २०२३



महर्षि दयानन्द सरस्वती की  
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा  
का मुखपत्र



विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,  
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।  
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,  
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः॥

<p>वर्ष : ६५ अंक : ०९ दयानन्दाब्द: १९९ विक्रम संवत् - वैशाख शुक्ल २०८० कलि संवत् - ५१२४ सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२४ ■ सम्पादक डॉ. वेदपाल ■ प्रकाशक- परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१ दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४ ०८८९०३१६९६१ ■ मुद्रक-देवमुनि-भूदेव उपाध्याय वैदिक यन्त्रालय, अजमेर। ■ परोपकारी का शुल्क भारत में एक वर्ष-४०० रु. पाँच वर्ष-१५०० रु. आजीवन ( २० वर्ष ) -६००० रु. एक प्रति - २०/- रु. वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२० ०७८७८३०३३८२ ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८</p>	<p style="text-align: center;"><b>RNI. No. ३९५९ / ५९</b></p> <h2 style="text-align: center;">परोपकारी</h2> <h3 style="text-align: center;">मई-प्रथम, २०२३</h3> <h3 style="text-align: center;">अनुक्रम</h3> <table><tr><td>०१. आर्यसमाज : लक्ष्य-उपलब्धि...</td><td>सम्पादकीय</td><td>०४</td></tr><tr><td>०२. महर्षि दयानन्द का मूल्याङ्कन-५</td><td>प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'</td><td>०६</td></tr><tr><td>०३. वेदों में इतिहास</td><td>स्वामी विद्यानन्द सरस्वती</td><td>१०</td></tr><tr><td>०४. अग्नि सूक्त-४३</td><td>डॉ. धर्मवीर</td><td>१५</td></tr><tr><td>०५. सत्यम् ब्रह्म</td><td>डॉ. रामनारायण शास्त्री</td><td>१८</td></tr><tr><td>०६. आध्यात्मिक चिन्तन के क्षण</td><td>मुनि सत्यजित्</td><td>२५</td></tr><tr><td>०७. संस्था समाचार</td><td>श्री ज्ञानचन्द</td><td>२६</td></tr><tr><td>* योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर</td><td></td><td>२८</td></tr><tr><td>* आर्यवीर एवं आर्य वीरांगना श्रेणी का प्रशिक्षण शिविर</td><td></td><td>२९</td></tr><tr><td>* परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट</td><td></td><td>३०</td></tr><tr><td>०८. संस्था की ओर से....</td><td></td><td>३२</td></tr><tr><td>* परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम</td><td></td><td>३३</td></tr><tr><td>* 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति</td><td></td><td>३४</td></tr></table>	०१. आर्यसमाज : लक्ष्य-उपलब्धि...	सम्पादकीय	०४	०२. महर्षि दयानन्द का मूल्याङ्कन-५	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०६	०३. वेदों में इतिहास	स्वामी विद्यानन्द सरस्वती	१०	०४. अग्नि सूक्त-४३	डॉ. धर्मवीर	१५	०५. सत्यम् ब्रह्म	डॉ. रामनारायण शास्त्री	१८	०६. आध्यात्मिक चिन्तन के क्षण	मुनि सत्यजित्	२५	०७. संस्था समाचार	श्री ज्ञानचन्द	२६	* योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर		२८	* आर्यवीर एवं आर्य वीरांगना श्रेणी का प्रशिक्षण शिविर		२९	* परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट		३०	०८. संस्था की ओर से....		३२	* परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम		३३	* 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३४
०१. आर्यसमाज : लक्ष्य-उपलब्धि...	सम्पादकीय	०४																																						
०२. महर्षि दयानन्द का मूल्याङ्कन-५	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०६																																						
०३. वेदों में इतिहास	स्वामी विद्यानन्द सरस्वती	१०																																						
०४. अग्नि सूक्त-४३	डॉ. धर्मवीर	१५																																						
०५. सत्यम् ब्रह्म	डॉ. रामनारायण शास्त्री	१८																																						
०६. आध्यात्मिक चिन्तन के क्षण	मुनि सत्यजित्	२५																																						
०७. संस्था समाचार	श्री ज्ञानचन्द	२६																																						
* योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर		२८																																						
* आर्यवीर एवं आर्य वीरांगना श्रेणी का प्रशिक्षण शिविर		२९																																						
* परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट		३०																																						
०८. संस्था की ओर से....		३२																																						
* परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम		३३																																						
* 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३४																																						
	<p style="text-align: center;">www.paropkarinisabha.com email : psabhaa@gmail.com उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ <a href="http://www.paropkarinisabha.com">www.paropkarinisabha.com</a>→gallery→videos</p>																																							

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये।  
किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

## आर्यसमाज : लक्ष्य-उपलब्धि-प्रासंगिकता एवं चुनौती

मनुष्य एवं मनुष्येतर सभी प्राणी समूह में रहते हैं। मनुष्येतर प्राणी आत्मरक्षण तथा भोजन प्राप्ति (विशेष रूप से शिकार करनेवाले) के कारण समूह में रहते हैं। मनुष्य का समूह में रहने का प्रयोजन उक्त कारणों से बढ़कर बौद्धिक एवं आत्मिक विकास के साथ स्थायी शान्ति की तलाश भी है।

संस्कृत व्याकरण के अनुसार पशुओं/पक्षियों के समूह को समज (सम्+अज्+अप्) तथा मनुष्यों के समूह/समुदाय को समाज (सम्+अज्+घञ्) कहा गया है। अन्य प्राणी केवल नैसर्गिक जीवन व्यतीत करते हैं, किन्तु मनुष्य का जीवन मर्यादाओं/सीमाओं में निबद्ध रहता है। इन मर्यादाओं का उद्देश्य जीवन को सफल बनाते हुए मानव का सर्वांगीण विकास करना है। इसमें शारीरिक विकास के साथ मानसिक-बौद्धिक विकास करते हुए आत्मतत्त्व को जान लेना सम्मिलित है।

इतिहास साक्षी है कि समय-समय पर विश्व के किसी भी भाग में इस प्रकार के महापुरुष हुए हैं, जिन्होंने अपने समय के अनुरूप पूर्ववर्ती मत-सम्प्रदाय के अनुयायियों को स्वमत में दीक्षित कर इस प्रकार प्रेरित किया कि वह नवीन सम्प्रदाय इतना फैला कि मूल सम्प्रदाय और उसकी परम्पराएँ एवं प्रथाएँ तक बदल गईं। उपास्य भी बदले और उपासना पद्धति भी बदल गई। यह भी देखा जा सकता है कि नवीन मत या सम्प्रदाय अपने पूर्ववर्ती का स्थानापन्न ही नहीं हुआ, अपितु उसका विरोधी भी हो गया। मत-सम्प्रदायों के इतिहास से परिचित उन मत पन्थों से भली प्रकार परिचित हैं।

भारतवर्ष के सन्दर्भ में जब इस विषय पर विचार करते हैं, तो एक मौलिक अन्तर दिखाई देता है कि इस देश में समय-समय पर जितने भी मत-पन्थ-सम्प्रदाय प्रवृत्त हुए उन सबका मूल केन्द्र बिन्दु कुछ ग्रन्थ,

मान्यताएँ-प्रथाएँ समान बनी रहीं। इस कारण ये किसी अंश में दूसरे से पृथक् तो रहे, किन्तु साँप-नेवले जैसा वैर-विरोध इनमें नहीं रहा। उन्नीसवीं शताब्दी से पूर्व भी अनेक आचार्यों ने अपने चिन्तन के आधार पर पूर्ववर्ती धार्मिक विचारों में अनेक अपने विचार सम्मिलित किए अथवा अनेक मान्यताओं का विरोध किया और नए संगठन का निर्माण भी किया। सिख पन्थ, कबीर पन्थ, दादू पन्थ इसके उदाहरण हैं। दार्शनिक चिन्तन के आधार पर अद्वैतवाद, द्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद सदृश विचारधाराएँ भी फूलती-फलती रहीं, किन्तु पश्चिमी मत पन्थों सदृश कटुता का अभाव ही रहा।

उन्नीसवीं शताब्दी जिसे पुनर्जागरण काल कहा जाता है, में भी अनेक सुधारवादी संगठन अस्तित्व में आए। इनमें ब्रह्मसमाज और प्रार्थना समाज कुछ प्रथाओं का विरोध करते हुए भी विचार प्रधान बने रहे। सत्यशोधक समाज सदृश सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध मानवीय अस्मिता की रक्षा में प्रयत्नशील रहे, किन्तु पश्चिमी/अरब सम्प्रदाय सदृश विरोध इनमें कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होता। इस शताब्दी में एक अन्य संगठन का भी उदय हुआ, जिसे **आर्यसमाज के नाम से जाना जाता है।**

महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना चैत्रशुक्ला प्रतिपदा संवत् १९३२ वि., अप्रैल १८७५ ई. को बम्बई में की थी। महर्षि अपने समय के प्रमुख संगठन-ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, सत्यशोधक समाज तथा थियोसोफिकल सोसायटी में से किसी एक के साथ मिलकर कार्य नहीं कर सके। यद्यपि महर्षि के इन सबके साथ मधुर सम्बन्ध थे। महर्षि की दृष्टि न तो सुगमता पर थी और न ही कोई नवीन मत पन्थ चलाने पर। वह तो केवल वेद के मन्तव्यों के प्रचार-प्रसार के द्वारा न केवल भारत, अपितु सम्पूर्ण

संसार का कल्याण चाहते थे। न तो किसी व्यक्ति या मत-पन्थ के प्रति राग था और न ही द्वेष। मेला चांदापुर (यह मेला कबीर पन्थियों द्वारा आयोजित किया गया था। इसमें मुस्लिम तथा ईसाई धर्म गुरुओं के साथ महर्षि को भी सादर निमन्त्रित किया गया था।) में मौलवी ने महर्षि से निवेदन किया कि पहले आप और हम मिलकर ईसाईयों को पराजित कर लें, बाद में हम विचार कर लेंगे इस पर महर्षि ने मौलवी को दिया उत्तर दिया कि यह मनुष्यता से बाहर है हम तीनों मिलकर सौहार्दपूर्वक सत्य असत्य का निर्णय करें तथा लॉर्ड लिटन के दिल्ली दरबार के समय विभिन्न पन्थाई (हिन्दू-मुस्लिम, इनमें बाबू केशवचन्द्र सेन, मुन्शी इन्द्रमणि, सर सैयद अहमद खां आदि प्रमुख थे।) के साथ सभी मतों की अविरोधी बातों के प्रचार पर दिया गया बल इसका साक्षी है।

वेद एवं संस्कृत साहित्य में 'आर्य' शब्द विशेषण के रूप में ही प्रयुक्त हुआ है। महर्षि समाज का विशेषण 'आर्य' रखकर सम्पूर्ण मानव समाज को श्रेष्ठ बनाना चाहते थे। इसीलिए अपना आदर्श वाक्य भी 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' को बनाया। यद्यपि महर्षि के पूर्ववर्ती एवं समकालीन पश्चिमी विद्वानों ने 'आर्य' शब्द को जाति वाचक बनाने का भरपूर प्रयास किया। इसी का परिणाम है कि अधिकांश शिक्षित वर्ग आज भी आर्य को जातिवाचक मानता है। उत्तर एवं दक्षिण का विवाद, जिसे द्रविड़ संस्कृति एवं आर्य संस्कृति में बाँटकर ईसाई मिशनरी अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाह रहे थे। तत्कालीन हिन्दू समाज वेद का नाम लेते हुए भी सम्यग् रूप से वेद एवं वैदिक सिद्धान्तों से परिचित नहीं रह गया था। ब्रह्म समाज के संस्थापक राजा राममोहन राय वेद के प्रति आस्थावान् थे, किन्तु बाबू केशवचन्द्र सेन (भले ही धर्मान्तरण न किया हो, किन्तु) ईसा के प्रति भक्ति भाव युक्त हो चुके थे।

ईसाई पादरी प्राणपण से भारत के ईसाईकरण में लगे थे। चर्च एवं शिक्षण संस्थान राज्याश्रय से फूलफूल

रहे थे। हिन्दू समाज जन्मना जाति-प्रथा तथा तज्जन्य छूतछात से ग्रस्त था। इससे पूर्व मुस्लिम शासक धर्मान्तरण के साथ-साथ पुरातन संस्कृति को समूल नष्ट करने का प्रयत्न करते रहे थे। इस पर भी भारतीय हिन्दू समाज में धार्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना का प्रस्फुरण दिखाई नहीं दे रहा था। धर्माचार्य वर्ग धार्मिक कर्मकाण्ड और सन्त समाज संसार को मिथ्या मानते हुए मुक्ति, स्वर्ग प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील हो रहा था। चहुँ ओर दृष्टिपात करने पर कहीं से भी हिन्दू संस्कृति के संरक्षण के सुनियोजित प्रयत्न नहीं दिख रहे थे। इतनी विषम परिस्थितियों के मध्य महर्षि ने संस्कृति एवं राष्ट्र चिन्तन के साथ मानव की अस्मिता का संरक्षण-संवर्धन करने के लिए 'आर्यसमाज' की स्थापना की।

आर्यसमाज की स्थापना के अनन्तर महर्षि को केवल आठ वर्ष का समय मिला। इस अवधि में ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका तथा वेदभाष्य के लेखन, शास्त्रार्थ, व्याख्याओं के माध्यम से महर्षि संकल्पपूर्ति के लिए प्राणपण से प्रयत्नशील रहे। स्थापना के लक्ष्य कोई साधारण श्रेणी के नहीं थे। वेद की निर्भ्रान्तता, ईश्वर के वास्तविक स्वरूप का प्रचार, सामाजिक कुप्रथा के रूप में बद्धमूल जन्मना जाति-प्रथा तथा तज्जन्य छुआछूत, विधवाओं की स्थिति, स्त्री एवं शूद्रों को वेदाधिकार, गौ संवर्धन, संस्कृत एवं हिन्दी भाषा का प्रचार, सभी मत-पन्थों की इस प्रकार की बातें जो सब में समान हों-के प्रचार के लिए धर्माचार्यों को प्रेरित करना तथा सैंकड़ों वर्षों की पराधीनता से मुक्त स्वदेशी राज्य के लिए प्रेरित करना आदि अनेक महत्तम लक्ष्य थे। इन्हीं लक्ष्यों की पूर्ति के लिए 'आर्यसमाज' की स्थापना की और शेष जीवन इन्हीं के पूर्यर्थ समर्पित कर दिया। आर्यसमाज इन्हें कहाँ तक उपलब्ध कर सका है? आदि बिन्दु विचारणीय हैं। -

क्रमशः

डॉ. वेदपाल

## महर्षि दयानन्द का मूल्याङ्कन-५

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

देश के कई प्रदेशों में महर्षि दयानन्द जी का मूल्याङ्कन लेखमाला के विषय में स्वाध्यायशील प्रबुद्ध गुणी पाठकों की चलभाष द्वारा हृदयस्पर्शी प्रतिक्रिया निरन्तर आ रही हैं। मैं ऐसे पाठकों का आभार प्रकट करते हुये सबको यही कहता हूँ कि आभार आपको मान्य डॉ. वेदपाल जी का प्रकट करना चाहिये। इस विषय पर इसी शैली में 'आर्यसमाज का इतिहास ग्रन्थमाला' में भी मैंने पर्याप्त सामग्री दी है, परन्तु जब हमारे मूर्धन्य विद्वान् ने इसी शीर्षक से परोपकारी के लिये एक लेखमाला माँगी तो चलभाष पर कुछ ऐसे शब्द कहे जिनसे मुझे अनायास इसी विषय पर इसी शैली से एक विशेष मौलिक पुस्तक लिखने का विचार सूझा। सम्भवतः यह डॉ. वेदपाल जी ने कल्पना ही नहीं की होगी कि उनकी प्रेरणा का ऐसा दूरगामी परिणाम निकलेगा।

लेखमाला की यह पाँचवीं मणि मैं भेजने वाला नहीं था। कारण इस विषय की मेरी पुस्तक पूर्णता की ओर बढ़ रही है। उसके प्रकाशन व प्रसार की व्यवस्था भी बहुत कुछ हो चुकी है। महर्षि का मूल्याङ्कन करने वाले अधिकांश देशी विदेशी इतिहासकारों ने ऋषि का एकाङ्गी और अधूरा ही मूल्याङ्कन किया है। वर्तमान में हमारे उत्सवों व पर्वों पर ऋषि जीवन पर ठोस सामग्री देने वाले तो कुछ विरले ही वक्ता हैं।

**ऋषि का टंकारा जन्म स्थान-** अभी तक हम जन-जन तक यह नहीं पहुँचा सके कि ऋषि का जन्म स्थान टंकारा पहले बड़ौदा राज्य में था। यह प्रचार तो हमने कर दिया कि उनके पिता जमादार के प्रतिष्ठित पद पर आसीन थे। देवेन्द्र बाबू जब ऋषि जीवन की खोज को निकले तो आप तीन बार टंकारा गये। मौरबी राज्य में 'जमादार' का कोई पद ही नहीं था तो क्या 'जमादार' पद का प्रचार एक झूठ था? देवेन्द्र बाबू की श्रद्धा भक्ति

से यह खोज सामने आई कि ऋषि के पिता सचमुच बड़ौदा राज्य की ओर से वहाँ जमादार के पद पर ही आसीन थे।

**आर्यमुसाफिर का वह शहीद नम्बर-** आर्यसमाज के इतिहास में मैंने यह बहुत बड़ी घटना दी है कि अंग्रेज सरकार ने सन् १९१५ ई. का हमारे लोकप्रिय प्रभावशाली मासिक का मार्च सन् १९१५ का शहीद अंक छपते ही शहीद कर दिया। सब प्रतियाँ जो अभी डाक में जानी थीं सरकार उठाकर ले गई। मैंने बड़े यत्न से इसकी एक प्रति कहीं से खोज निकाली। उसमें श्री देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय को ऋषि जीवन की खोज के लिये आर्थिक सहयोग करने के लिये एक छह पृष्ठ का दुर्लभ लेख मिलता है। देवेन्द्र बाबू ने सघन खोज करके टंकारा का एक सौ वर्ष का राजकीय रिकॉर्ड **निकलवा कर ऋषि के कथन की पुष्टि कर दी कि उनके पिता जमादार के पद पर आसीन थे। सत्यवादी, सत्यनिष्ठ दयानन्द कदापि झूठ नहीं कह सकते। देवेन्द्र बाबू की आपकी सत्यनिष्ठा पर अडिग श्रद्धा थी। उस काल में हिन्दुओं में धर्मप्रचार समाज सुधार के नाम पर कई विचारक सुधारक संस्थायें आर्यसमाज की स्थापना से पहले ही कार्यक्षेत्र में थीं। इन संस्थाओं ने भी ईसाई, मुसलमान, मिर्जाई, देवसमाजी, सनातनी व सरकार भक्त कुछ सिख लेखकों के सदृश ऋषि जी की निन्दा में जी भर कर लिखा था। ऋषि के जीवनकाल में तो उनका वैर विरोध ही किया जाता रहा, परन्तु उनके बलिदान के पश्चात् उनकी निन्दा में पुस्तकें भी छपकर आने लगीं।**

ऐसी पुस्तकों के छपने से जब ऋषि भक्तों ने ऐसे साहित्य का उत्तर प्रत्युत्तर दिया तब महर्षि का व्यक्तित्व, देन, उपकार व महानता निखर कर जनता के सामने सूर्य सदृश चमकने लगे। मैं पहले भी यह बता चुका हूँ कि

जीयालाल जैनी लिखित 'दयानन्द छपकपट दर्पण' ऐसी पहली घटिया पुस्तक थी। ऋषि का मूल्याङ्कन करने वालों ने इस तथ्य की अनदेखी कर दी कि इसी जीयालाल ने महर्षि की महिमा में कुछ बहुत सारी व प्रामाणिक बातें लिखकर ऋषि के विरोधियों को (गुजरौवाला के जैनियों को भी) नंगा कर दिया। कर्नल अलकॉट ने सहारनपुर में ३० अप्रैल सन् १८७९ में अपनी थियोसॉफिकल सोसाइटी की कौंसिल की एक असाधारण बैठक बुलाई फिर कर्नल व मैडम निःशंक होकर झूठ बोलने व झूठ गढ़ने का एक कीर्तिमान् स्थापित कर दिया। ऋषि जी की जानकारी के बिना ही उन्हें ३० अप्रैल १८७९ की बैठक में उपस्थित बताकर अपनी सोसायटी का कौरस्पाइडिंग फैलो भर्ती कर लिया। **ऋषि तो ३० अप्रैल के दिन सहारनपुर थे ही नहीं।** वह उस दिन देहरादून में थे।

जीयालाल जैनी ने भी कर्नल के इस मिथ्या कथन की पोल खोली। उसका यह व्यवहार प्रशंसा के योग्य है।

**अमेरिका में सागर पार ऋषि का मूल्याङ्कन-** अमेरिका के पत्र The Sunday Magazine में ऋषि की रेवाड़ी यात्रा के पश्चात् उनके चित्र सहित एक लम्बा लेख उनके शास्त्रार्थों व प्रचार के विषय में छपा। भारत के किसी विचारक, सुधारक, नेता और महापुरुष पर अमेरिका में इस युग में छपा यह पहला सारगर्भित अत्यन्त प्रभावशाली लेख था। इसकी खोज का श्रेय तो अकोला के आर्यवीर राहुल को है। इस लेख पर हमने पुस्तकों व लेखों में बहुत कुछ लिखा है। आर्यसमाज ने इसको जन-जन तक पहुँचाने के लिये कुछ नहीं किया। ऐसा मूल्याङ्कन तो किसी भारतीय पत्रकार इतिहासकार ने भी आज पर्यन्त नहीं किया।

इस लेख में छपा है कि काशी शास्त्रार्थ के पश्चात् काशी के पाषाण पूजकों के भगवानों का अवमूल्यन हो गया है। वह यह भी लिखता है कि ऋषि दयानन्द ललकार रहा है, "आओ दिखाओ वेद में मूर्तिपूजा कौनसे वेदमन्त्र में वर्णित है।" काशी ही नहीं देशभर का कोई

भी पण्डित वेद में मूर्तिपूजा का प्रमाण नहीं दे सका। डींगें तो मारने वाले अनेक हैं, परन्तु उससे शास्त्रार्थ करने की हिम्मत किसी को नहीं है। वह यह भी लिखता है कि संन्यासी तपस्वी ब्रह्मचारी को अपने आर्यसमाज के लिये सरकारी सहायता तथा सरकारी संरक्षण की कतई इच्छा **Ua8a8)इससे अच्छा व निष्पक्ष ऋषि का मूल्यांकन किस लेखक व इतिहासकार ने किया है?**

प्रबुद्ध पाठकवृन्द यह नोट कर लीजिये, "सब जानते हैं कि महर्षि न तो कभी सागर के पार गये और न ही उनको अंग्रेजी आदि कोई परकीय भाषा ही आती थी। वे किसी विदेशी शक्ति, सत्ता, सभा, संस्था के समर्थक, प्रशंसक व कृपापात्र भी नहीं थे। इस पर भी उनके कृतित्व, व्यक्तित्व व चिन्तन पर इतने महत्त्वपूर्ण व मौलिक लेख का लिखा जाना और 'सण्डे मैगज़ीन' सरीखे पत्र में उसका प्रकाशन ऐतिहासिक महत्त्व की एक घटना है। इस लेख के आर-पार जाते हुए अनायास ही ये पंक्तियाँ हमारे अधरों पर उतर आई-

**जन्मे टंकारा अन्दर स्वामी जयकार तेरा।**

**गूँजा शुभ नाम स्वामी सागर के पार तेरा।।"**

आश्चर्य का विषय है स्वामी विवेकानन्द के शिकागो भाषण का ढोल पीटने वालों ने उससे बहुत पहले अमेरिका में ऋषि पर छपे इस ऐतिहासिक लेख की, हिन्दुत्व की रट लगाने वाले किसी छोटे बड़े नेता ने आज तक नहीं की।

**ऋषि के ब्रह्मचर्य का डंका बजा-** इसी लेख में अत्यन्त सजीव भाषा में यह भी छपा मिलता है कि ऋषि जी के ब्रह्मचर्य के कारण मुखड़े के तेज के आकर्षण के कारण भी लोग उसकी ओर खिंच कर आते हैं।

**उनका खानपान और उनकी सरलता-** महर्षि के सब बड़े-बड़े जीवनी लेखक यह मानते-जानते हैं कि अनेक बार योग साधना के लिये यात्रायें करते हुये अपने कच्चे बैंगन खाकर ही शरीर की भूख मिटाई। खान-पान के लिये सार्वजनिक जीवन में उनकी सुरुचिकर भोजन की कोई विशेष माँग नहीं थी।

स्वामी विवेकानन्द लाहौर जब आये तब स्वामी रामतीर्थ वहाँ प्राध्यापक थे। स्वामी विवेकानन्द आपके अतिथि थे। आपका एक सगा भतीजा (मैं नाम भूल गया) उनके पास ही तब रहकर पढ़ता था। उसने उर्दू में स्वामी विवेकानन्द की एक जीवनी में लिखा है कि स्वामी विवेकानन्द की यह माँग थी कि उनको भोजन में मांस मिलना ही चाहिये। पक्के शाकाहारी रामतीर्थ मांस देख भी न सकते थे। आपने अपने भतीजे को कहा कि इनके लिये बाजार से किसी से मांसाहार लाकर इन्हें तू ही दिया कर। वह किसी हिन्दू या मुसलमान से स्वामी विवेकानन्द को लाकर मांस वहाँ तब खिलाता रहा। यह जीवनी दिल्ली से कभी रसाला ओ३म् उर्दू वालों ने प्रकाशित की थी।

पाठक अब इसके साथ ऋषि दयानन्द की जीवन शैली का मिलान कर उनका मूल्याङ्कन तो करें।

**दार्शनिक सैद्धान्तिक दृष्टि से मूल्याङ्कन-** ऋषि जीवन की घटनाओं के प्रामाण्य दे देकर तो मूल्याङ्कन किया ही जाता है। ऋषि दयानन्द की सैद्धान्तिक तथा दार्शनिक छाप के दो प्रमाण देकर भी उनकी देन तथा महिमा का मूल्याङ्कन करना ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। अंग्रेजी राज में स्कूलों कॉलेजों की पाठ्य पुस्तकों द्वारा तथा सरकारी संरक्षण में फैल रहे ईसाई चर्च द्वारा भी मांसाहार का बहुत प्रचार किया गया। ऋषि दयानन्द ने जब वेद प्रचार अभियान चलाया तो खुलकर मांसाहार का खण्डन और शाकाहार का मण्डन भी खुल कर करते रहे।

बाइबल के सौ सवा सौ वर्ष पहले के अंग्रेजी, हिन्दी व उर्दू के आप संस्करण पढ़ेंगे तो आरम्भ से मांसाहार की चर्चा हम पढ़ते सुनते रहे। अब अमेरिका, इंग्लैण्ड भारत से छपे संस्करण पढ़िये तो आप को ऐसे पाठ मिलेंगे, “You are free to eat from any tree in the garden.”<sup>1</sup> अर्थात् उद्यान के किसी भी वृक्ष से आप फल खाने में स्वतन्त्र हैं।

फिर एक पाठ है- “Then god said I give

you every seed bearing plant on the face of the whole earth and every tree that has fruit with seed in it. They will be your food...I give you every green plant for food.”<sup>2</sup> अर्थात् धरती तल के सब फल आपका भोजन हैं। मैं तुम्हें सब हरे-भरे पौधे आपको भोजन के रूप में देता हूँ। यह किसके व्यक्तित्व के प्रभाव से मांसाहार का परित्याग और शाकाहार का ईश्वरीय विधान हो गया? जिस ऋषि ने अपने अमर ग्रन्थ में बाइबल पर भी अपने विचार देकर ईसाइयों को सोचने पर विवश किया, यह उसी की देन है। इससे अधिक इस विषय में कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं। अमेरिका से प्रकाशित बाइबल में कई पाठ भेद देखकर विचारशील पाठक गद्गद हो जायेंगे। यह सब सत्यार्थप्रकाश का चमत्कार है। हम इसका स्वागत करते हैं।

**बाल विधवाओं के लिये ऋषि का रक्तरौदन-** किसी भी हिन्दू नेता ने महर्षि की तीसरी जन्म शताब्दी पर महर्षि का स्मरण करते हुये नन्ही अबोध विधवाओं के लिये उनके दर्दिले दिल की आहो तथा चीत्कार का मूल्याङ्कन करते हुये कृतज्ञता के दो शब्द न कहे। सन् १८७४ में महर्षि जब मुम्बई यात्रा पर गये तब आपने एक दिन शिशु बाल विधवाओं की चीत्कार को सुन-सुनकर के इन शब्दों में अपना रक्तरौदन किया, “जब पाँच वर्ष की पुत्री विधवा होती है तो कहते हैं कि कर्म फूट गये। कोई उस समय यह नहीं कहता कि तुम्हारी तथा तुम्हारे मार्गदर्शकों के हृदय की आँखें फूटी हैं।”

आर्यसमाज स्थापना से पूर्व के समय तथा आर्यसमाज स्थापना के पश्चात् भी कोई आधी शताब्दी तक देश के किसी बड़े धार्मिक व राजनीतिक नेता को ऐसे पीड़ा से परिपूर्ण शब्दों में नन्हीं विधवाओं के लिये अपने कलेजा चीर कर दिखाते हुये किसी पुस्तक व लेख में नहीं पढ़ा। बापू गांधी भी तो मौन साधे रहा।

जब गुजरात में किसी ने भोजन के लिये न



**पूछा** – महर्षि को अपने वेद प्रचार तथा देश सुधार के मिशन के लिये कई बार विचित्र परिस्थितियों का सामना करना पड़ा फिर भी उन्होंने न तो किसी को दोष दिया और न कभी ऐसी घटनाओं व कष्टों को मौखिक रूप से अथवा वाणी से चर्चा का विषय बनाया। ऐसे व्यवहार अथवा तिरस्कार के लिये किसी को भला बुरा कहने की तो बात ही नहीं। गृह-त्याग करने के पश्चात् ऋषि जी पहली व अन्तिम बार अपने जन्म के प्रदेश गुजरात यात्रा पर निकले तो सूरत पहुँचने पर किसीने अतिथि सत्कार के लिये पूछा ही नहीं।

उनके पास जो थोड़े से रुपये थे, वह दो चार दिन में समाप्त हो गये। पं. कृष्णराम जी के पास भी मात्र दो रुपये थे। वे भी समाप्त हो गये।

“पण्डित जी उनके लिये बाजार से खिचड़ी लाकर खिलाते रहे। जब सब पैसे समाप्त हो गये तो पण्डित जी ने कविवर नर्मदाशंकर जी को वास्तविकता से अवगत करवाया। उन्हें इससे बहुत लज्जा आई। उन्होंने तुरन्त इस निमित्त कुछ धन संग्रह किया।”

त्याग, तपस्या, मान-अपमान और संन्यास में सहनशीलता की धर्मगुरु बाबा लोग बातें तो बहुत करते हैं, परन्तु व्यवहार में कुछ करके दिखाना अति कठिन है। ऋषि के जीवन की ऐसी-ऐसी घटनाओं को ध्यान में रखकर उनका मूल्याङ्कन करने का श्रम कितने इतिहासकारों ने किया?

इसके विपरीत एक घटना का उल्लेख कितने इतिहासज्ञों ने जाना? भुज कच्छ का महाराज अवयस्क था। उसे गोरों ने महाराज तो मान लिया, परन्तु राजकाज तो ऐसी स्थिति में (Resident) रेजीडेन्ट ही चलाता है। दीन दरिद्र प्रजा की उसे क्या चिन्ता? भुज कच्छ की भोली दरिद्र प्रजा की चिन्ता करते हुये महर्षि ने एक विशेष पत्र महादेव गोविन्द रानडे तथा गोपाल हरिदेशमुख को डाक से न भेजकर By hand (किसी के हाथ) उन्हें यह पत्र भेजा। डाक से भेजना ठीक न जाना। ऋषि

ने उन्हें कहा कि भुज कच्छ की प्रजा का आप ध्यान रखना। उन्हें दुःख न भोगने पड़ें। इस पत्र के बिना ऋषि का मूल्याङ्कन क्या कोई कर सकता है? उस युग का ऐसा कोई उदाहरण क्या किसी अन्य नेता, विचारक के जीवन में कोई दिखा सकता है? पत्र व्यवहार में यह पत्र मिल सकता है।

**सूरत का चौथा व्याख्यान**— गुजरात में सूरत यात्रा के समय ऋषि का चौथा व्याख्यान एक सेठ के शिवमन्दिर में होना था। जब श्रोता शिवमन्दिर के पास वाले इस मन्दिर में होने का समय हुआ तो वह भीतर से बन्द था। श्रोता तो समय पर पहुँच गये। स्थान बदलने का उस घड़ी सुझाव जो दिया गया तो ऋषि ने अस्वीकार कर दिया। इससे श्रोताओं को कष्ट ही होगा। वहीं धूप में कार्यक्रम करके दिखाने की दृढ़ता दिखाई। श्रोता भी वहीं डटकर बैठ गये।

जब व्याख्यान हो रहा था तब सूरत के एक धर्मात्मा मठाधीश मोहनबाबा भी पधार गये। मोहन बाबा, ब्रह्मचारी ने दण्डवत होकर ऋषि जी का अभिवादन किया। आपने उन्हें पकड़कर उठाया। उनके लिये एक कुर्सी आगे करके उस पर बैठने का आग्रह किया। आपके इस बड़प्पन का श्रोताओं पर गहरा प्रभाव पड़ा।

ऋषि का व्याख्यान रोकने के लिये उस स्थान को जो भीतर से बन्द कर दिया गया वह एक शरारत या षड्यन्त्र ही तो था। इस पर महर्षि ने किञ्चित् रोष युक्त प्रतिक्रिया न दी। उनके साथ किये गये इस दुर्व्यवहार पर आपने धैर्य का परिचय दिया तथा अपने कार्यक्रम को भी सफल बनाकर दिखाया। आपको ब्रह्मचारी मोहनबाबा से जो सहयोग मिला उसको ध्यान में रखकर महर्षि की महानता का मूल्याङ्कन करना चाहिये। अधूरा मूल्याङ्कन देश व समाज से अन्याय ही तो है। इतिहास से न्याय यदि हम चाहते हैं तो ऐसे प्रसंग लेखनी व वाणी से क्यों नहीं मुखरित किये जाते?

**वेद सदन, नई सूरज नगरी, अबोहर, पंजाब**

## वेदों में इतिहास

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

कीर्तिशेष स्वामी विद्यानन्द सरस्वती आर्यजगत् के प्रमुख विद्वान् एवं सिद्धहस्त लेखक थे। स्वामी जी का यह लेख साभार प्रकाशित किया जा रहा है। -सम्पादक

वेद के त्रिकालाबाधित होने से वेद की अन्तः साक्षी से किसी इतिहास सम्बन्धी बातों का निश्चय नहीं हो सकता। इसलिए वेद के सन्दर्भों को देखकर एक दो शब्दों के आधार पर किया गया कोई निर्णय तर्कसंगत नहीं हो सकता। लोकमान्य तिलक ने वेद में निर्दिष्ट कतिपय नक्षत्रों की विशेष स्थिति के आधार पर वेद के काल का निश्चय किया है। उन्होंने अपने ग्रन्थ ओरायन (Orion) में लिखा है कि ऋग्वेद के १०वें मण्डल के ८६वें सूक्त में वसन्त समाप्त का मृगशीर्ष नक्षत्र में होने का वर्णन है। मृगशीर्ष नक्षत्र वर्तमान उत्तर-भाद्रपदा से ६ नक्षत्र पहले है। वसन्त सम्पात को एक नक्षत्र से दूसरे नक्षत्र में जाने में ९६० वर्ष लगते हैं। इस हिसाब से मृगशीर्ष नक्षत्र में वसन्त सम्पात आज से लगभग ६००० वर्ष (६६ × ६) पूर्व रहा होगा। यही इस सूक्त के कारण वेद का रचनाकाल है। आपाततः यह तर्क ठीक प्रतीत होता है, परन्तु थोड़ी-सी गहराई में जानेपर इसका थोथापन स्पष्ट हो जाता है। नक्षत्रों की कुल संख्या २७ है। इस प्रकार हर २५९२० (९६० × २७) वर्षों बाद वसन्त सम्पात क्रान्तिवृत्त पर घूमकर फिर अपने पहले स्थान पर आ जाता है। यदि ईसा से लगभग ६००० वर्ष पूर्व वसन्त सम्पात मृगशीर्ष नक्षत्र में था तो उससे लगभग २६००० वर्ष पूर्व अर्थात् आज से लगभग ३२००० वर्ष पूर्व भी उसी नक्षत्र में था। उससे भी पहले २६००० वर्ष पूर्व वसन्त सम्पात मृगशीर्ष नक्षत्र में आता रहा। सृष्टि के लगभग दो अरब वर्ष के स्थिति काल में कितनी बार यह स्थिति आई। सोमवार हर सात दिन के बाद फिर से आ जाता है। तब मात्र सोमवार कहने से आज से एक सप्ताह पूर्व का ही सोमवार क्यों समझा जाए? एक

महीना, एक वर्ष या सौ वर्ष पहले का सोमवार भी क्यों न समझा जाए। वेद में वर्णित यह नक्षत्र-स्थिति आज से ६००० वर्ष पहले की ही है उससे पहले की नहीं इसके लिए कोई निश्चयात्मक हेतु नहीं है। आज से लगभग २० हजार वर्ष बाद (२६०००-६०००) वसन्त सम्पात फिर मृगशीर्ष नक्षत्र में होगा। तब उससे पाँच सौ वर्ष पश्चात् पैदा होनेवाला विद्वान् इस तर्क के आधार पर वेद को अपने से केवल ५०० वर्ष पूर्व का ही सिद्ध करेगा। वस्तुतः इतिवृत्तात्मक रूप में वेद में किसी प्रकार के ऐतिहासिक या भौगोलिक संकेत न होने से इस प्रकार के सभी मत केवल कल्पना पर आधारित हैं।

ऐतिहासिक व्यक्तियों तथा भौगोलिक स्थानों के नाम अलग-अलग पड़े भले ही वेदों में इतिहास होने का भ्रम उत्पन्न करें, परन्तु जब उन्हें सन्दर्भान्तर्गत पूर्वापर सम्बन्धों को जोड़कर उनमें सामंजस्य करने की चेष्टा की जाती है तो तथ्यों के विपरीत होने से उनकी तथाकथित ऐतिहासिकता का तत्काल लोप हो जाता है। अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए हम यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत करते हैं-

१. अथर्ववेद (१३/३/२६) में आया है- 'कृष्णायाः पुत्रो अर्जुनः।' आपाततः इस मन्त्र में कृष्णा (द्रौपदी) के पुत्र अर्जुन का उल्लेख हुआ प्रतीत होता है। यदि वास्तव में ऐसा होता तो अर्जुन को द्रौपदी का पति बताना चाहिए था जैसा कि महाभारत में लिखा है। इन पदों का यौगिक अर्थ करने पर स्थिति स्पष्ट हो जाती है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार कृष्णा रात्रि का नाम है और रात्रि से उत्पन्न होने वाले सूर्य या दिन का नाम अर्जुन है- 'रात्रि वै, कृष्णा असावादित्यस्तस्यां वत्सोऽर्जुनः।' इस प्रकार

यहाँ कृष्णा से महाभारत की द्रोपदी और अर्जुन का ग्रहण नहीं किया जा सकता।

२. अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च (ऋ. ६/९/१) - यहाँ कृष्ण और अर्जुन एक ही व्यक्ति के नाम हैं, जबकि इतिहास (महाभारत) के अनुसार ये दो भिन्न व्यक्ति हैं। वस्तुतः यहाँ कृष्ण और अर्जुन दोनों दिन के नाम हैं।

३. यजुर्वेद (२३/१८) में अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका तीनों नामों को एक साथ देखकर कह दिया जाता है कि ये तीनों वही लड़कियाँ हैं जिन्हें भीष्म भगाकर ले गये थे, परन्तु यहाँ उन्हें काम्पीलवासिनी कहा है, जबकि महाभारत ने इन्हें काशिराजकी कन्याएँ बताया है। वस्तुतः ये शब्द माता, दादी और परदादी के वाचक हैं। अथवा यजुर्वेद १२/७६ व ३/५७ में आयुर्वेद में ये ओषधियों के नाम हैं।

यही स्थिति भौगोलिक संकेत देने वाले शब्दों की है। यजुर्वेद में मन्त्र आया है-

**पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्त्रोतसः।**

**सरस्वती तु पञ्चधा सो देशोऽभवत्सरित्॥**

-३४/११

इस मन्त्र में पाँच नदियों का उल्लेख होने से यहाँ पंजाब अर्थात् एक प्रदेश विशेष का उल्लेख बताया जाता है। सभी जानते हैं कि न तो सरस्वती नाम की नदी पंजाब में बहती है और न पंजाब की प्रसिद्ध पाँच नदियाँ सरस्वती में मिलती हैं और न सरस्वती ही पाँच धाराओं में बहती है। वास्तव में इस मन्त्र में पाँच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान अथवा मन की पाँच वृत्तियों का स्मृति में ठहरकर वाणी द्वारा अनेकविध अभिव्यक्त होने का उल्लेख है।

ऋग्वेद (१०/७५/५) के जिस मन्त्र के आधार पर आर्यों के सप्तसिन्धु (सात नदियोंवाले) देश में बसने की कल्पना की जाती है, वहाँ सात के स्थान पर दस नदियोंके नाम दिये हैं। अगले ही मन्त्र में लखनऊ के पास बहनेवाली गोमती का नाम भी आया है। मन्त्र इस प्रकार

है-

**इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शतुद्रि स्तोमं सचता परुष्या।**

**असिक्न्या मरुद्वधे वितस्तयार्जीकीये**

**शृणुह्या सुषोमया॥**

भगीरथ द्वारा गंगा के लाये जाने से बहुत पहले वेदों का प्रादुर्भाव हो चुका था। गोमती की गिनती तो नई नदियों में की जाती है। इन शब्दों को नदीपरक मानकर इनकी संगति नहीं बैठ सकती। भौगोलिक वर्णन से इन मन्त्रों का कोई सम्बन्ध नहीं है। वस्तुतः यहाँ आध्यात्मिक स्रोतों और शरीरस्थ इडा पिंगला आदि नाडियों का वर्णन है। कालान्तर में इन्हीं मन्त्रों से शब्द लेकर नदियों का नामकरण कर दिया गया। वेद से लोक में नाम आये हैं, लोक से वेद में नहीं।

यह सब लिखने का हमारा अभिप्राय इतना ही है कि वेद में आये शब्दों के आपाततः ऐतिहासिक अथवा भौगोलिक संकेत करने के कारण उनके आधार पर आर्यों के विदेशी होने का निश्चय करना युक्तियुक्त नहीं है।

कुछ वर्ष हुए यूनेस्को के तत्त्वावधान में होनेवाली एक अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी में भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करनेवाले सात सदस्यीय दल ने एक मत से आर्यों के ईरान से आकर भारत में बसने विषयक मान्यता का प्रतिवाद किया था। इस सन्दर्भ में हिन्दुस्तान टाइम्स के ३१ अक्टूबर १९७७ में प्रकाशित यह विवरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है-

'There is no conclusive evidence of Aryan immigration into India from outside, according to Indian historians, linguists and archaeologists who participated in the international seminar in Dashambe, the capital of Soviet Republic of Tajikistan. Dr. N. R. Banerjee, Director of national Museum and a member of the Indian delegation, said

that Indian scholars made out this point at the seminar and the papers presented by them were very much appreciated. The seminar was held under the aegis of UNESCO to discuss the problem of ethnic movement during the second millennium B. C. Nienty delegates from the Soviet Union, West Germany, Iran, Pakistan and India attended. The seven member Indian delegation was led by Prof. B. B. Lal, Director of Advanced Studies. It was pointed out by Indian scholars that the archaeological material associated with Aryans in different regions and periods in India did not show any links with the archaeological survival of the Aryans in Afghanistan, Iran and Central Asia."

तात्पर्य यह है कि पुरातत्त्व के आधार- पर इस बात की एक भी साक्षी नहीं मिली जिससे आर्यों का कहीं बाहर- ईरान, अफगानिस्तान या मध्य एशिया से आकर भारत पर बलात् अधिकार कर लेना सिद्ध होता हो।

तत्पश्चात् हम इस देश के दो शिक्षा मन्त्रियों- श्री प्रतापचन्द्र तथा श्रीकृष्णचन्द्र पन्त- से मिलकर आग्रह कर चुके हैं कि जब स्वयं सरकार द्वारा नियुक्त अधिकृत विद्वानों की ओर से समवेत स्वर में आर्यों के बाहर से आने सम्बन्धी भ्रान्त धारणा का प्रत्याख्यान हो चुका है, तब शिक्षा मन्त्रालय तथा गृह मन्त्रालय का यह कर्तव्य है कि इस विषय में निश्चित आदेश देकर इतिहास की पुस्तकों, सरकारी निर्देशों, संविधान आदि में से आदिवासी जैसे शब्दों तथा आर्यों एवं द्रविड़ों आदि में भेद-विषयक विवरणों को निकलवा दें।

हमारे पास इस बात के पुष्ट प्रमाण हैं कि आर्यलोग इस देश के मूल निवासी हैं और उनसे पहले यहाँ कोई अन्य जाति नहीं रहती थी। इस देश का सबसे प्राचीन

नाम आर्यावर्त है। जहाँ कहीं भी मनुष्यों का वास होता है, उन भूखण्ड को किसी-न-किसी नाम से अवश्य जाना जाता है। आर्यों के आने (?) से पूर्व यदि यहाँ द्रविड़ों आदि का वास रहा होता तो उनकी भाषा और साहित्य में इस देश का कोई-न-कोई नाम अवश्य उपलब्ध होता। इस प्रकार का कोई संकेत न पाये जानेसे विस्पष्ट है कि आर्यों के इस देश पर आक्रमण की बात सर्वथा कपोलकल्पित है। T. Burrow जैसे विश्वविख्यात पुरातत्त्ववेत्ता ने लिखा है- "The Aryan invasion of India is recorded in no written document and it cannot yet be traced archaeologically." Quoted from The Early Aryans published in cultural History of India, edited by A. L. Basham, published by Clarendon Press Oxford, 1975

अर्थात् आर्यों के भारत पर आक्रमण की मान्यता का न कोई प्रमाण है और न इसे पुरातत्त्व की सहायता से सिद्ध किया जा सकता है।

इस प्रसंग में प्रायः सिन्धु घाटी की हड़प्पा संस्कृति का राग अलापा जाता है। हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ों में इस निमित्त किये गये उत्खनन (Excavations) में उपलब्ध सामग्री के आधार पर यह दावा किया जाता है कि यह इस देश की प्राचीनतम संस्कृति है। इसके पतन के बाद ही यहाँ आर्यों का आगमन हुआ था। इस विषय में हम अपनी ओर से कुछ न कहकर मोहनजोदड़ों की खुदाई में प्राप्त एक सील (मुद्रा) की प्रतिकृति जो स्वयं अपनी कहानी कहती प्रतीत होती है-

वहाँ एक वृक्ष पर बैठे दो पक्षी दिखाई दे रहे हैं जिनमें से एक फल खा रहा है, जबकि दूसरा केवल देख रहा है। ऋग्वेद का मन्त्र इस प्रकार है-

**द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते।**  
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ॥

ऋग्वेद १/१६४/२०

इस मन्त्र का भाव यह है कि एक (संसाररूपी) वृक्ष पर दो (लगभग एक जैसे) पक्षी बैठे हैं। उनमें एक उसका भोग कर रहा है, जबकि दूसरा बिना उसे भोगे उसका निरीक्षण कर रहा है। स्पष्ट है, मोहनजोदड़ो की खुदाई में प्राप्त चित्र में जो कुछ दिखाया गया है, उसका आधार ऋग्वेद का उपर्युक्त मन्त्र है। यह निर्विवाद है कि संसार में ऋग्वेद से पुरानी कोई पुस्तक नहीं है। कलाकार द्वारा बनाये गये चित्र से पहले ऋग्वेद का अस्तित्व सिद्ध है। मोहनजोदड़ो की खुदाई में इस चित्र के पाये जाने से वेदों का (कम से कम ऋग्वेद का) तथाकथित हड़प्पा संस्कृति का पूर्ववर्ती होना सिद्ध है। वेद आर्यों के ग्रन्थ हैं, इसलिए सबसे पूर्व आर्यों का होना प्रमाणित है। पुरातत्व विभाग से सम्बद्ध हमारे एक सहाध्यायी मित्र का कहना है कि हो सकता है कि हड़प्पा और आर्य संस्कृति समकालीन हों। दुर्जनतोषन्याय से यह मान लिया जाए तो भी आपसे पहले किसी के यहाँ होने की कल्पना तो मिथ्या सिद्ध होती ही है।

इसी प्रसंग में इण्डियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली, ३-८-८५) में प्रकाशित यह विवरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है-

"Mr. Vishnu Shridhar, Vakankar former Head of the Archaeology Department of Ujjain (Vikram) University, claimed here on Thursday that he had successfully made a break through in solving the mystery of the writing of the seal found in the Indus Valley civilisation of Harappa and Mohenjodaro. He claimed that the Indus Valley civilisation script was original to India and its roots are found in the Aryan Civilisation".

He challenged foreign claims that the Indus Valley Civilisation was non-Aryan by stating that recent results were based on

computers".

डॉक्टर वाककर ने अपने दूसरे वक्तव्य में, जो TIMES OF INDIA (AHMEDABAD, २२.१२.८५) में प्रकाशित हुआ, कहा- " His survey (conducted by 30 experts drawn from different disciplines like archaeology. geology, history, folklore etc.) when completed might even drastically change the popular conception among historians that Aryans invaded India from Central Asia etc."

अर्थात् उज्जैन (विक्रम) विश्वविद्यालय में पुरातत्व विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष डॉ. विष्णु श्रीधर वाकंकर ने ३० विशेषज्ञों के सहयोग से सिन्धु घाटी की सभ्यता से सम्बन्धित सामग्री का २० वर्ष तक अध्ययन करके यह सिद्ध किया है कि हड़प्पा की सभ्यता का मूल आर्यसभ्यता में था, अर्थात् हड़प्पा सभ्यता से आर्य सभ्यता पुरानी थी। उनके मत में हड़प्पा सभ्यता आर्य सभ्यता का ही अंग थी। यह निष्कर्ष उन्होंने कम्प्यूटर की सहायता से निकाला है। डॉ. वाकंकर- का यह भी कहना है कि जब उनकी खोज का काम पूरा हो जाएगा तो वह आर्यों के विदेशी आक्रान्ता होने की मान्यता को मिथ्या सिद्ध कर सकेंगे।

१९६० में सर्वप्रथम डॉ. फतहसिंह ने सिन्धु लिपि को सफलतापूर्वक पढ़ा था। उन्होंने उस समय तक लगभग ढाई हजार मुद्राएँ पढ़ ली थीं जिनके आधार पर (राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित होनेवाली 'स्वाहा' पत्रिका में उन्होंने कई लेख लिखे थे। डॉक्टर फतहसिंह की खोज पर आधारित एक लेख डॉक्टर पद्मधर पाठक ने 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में उनके समर्थन में लिखा था इसके बाद इसी पत्र में केम्ब्रिज के डॉ. अल्चिन ने सम्पादक के नाम पत्र लिखकर उनको सावधान किया था कि डॉ. सिंह की खोज से तो आर्य तथा द्रविड़ सभ्यता का भेद ही नहीं रहेगा।

अनेक भारतीय विद्वानों ने आर्यों के भारतीय मूल के होने की मान्यता का समर्थन किया है। उन्होंने जिन तर्कों के सहारे अपने मत की पुष्टि की है, उनमें से कुछेक ये हैं-

१. एक देश को छोड़कर दूसरे देश में जा बसनेवाली जातियों को देश में शताब्दियों तक अपने मूल की स्मृति रहती है। भारत में बसे हुए पारसियों को आठ सौ वर्ष बीत जाने पर भी अपने मूल स्थान की स्मृति बनी हुई है। प्राचीन मिश्र देशवासियों तथा फिनिशियनों को अपने-अपने मूल के देशों का स्मरण है, भले ही वे उनको ठीक-ठीक स्थिति न बता सकें, परन्तु वैदिक आर्यों को अपने मूल निवास की कोई स्मृति नहीं है। वे सदा से इसी देश को अपना समझते आये हैं।

२. वैदिक साहित्य प्राचीनतम साहित्य है। यदि आर्य लोग बाहर से आकर यहाँ बसे तो क्या कारण है कि जहाँ कहीं से भी वे आये, उस देश में उनका साहित्य उपलब्ध नहीं होता। वहीं उसके कुछ अंश तो मिलने चाहिए थे। यह कहना कि आर्यों के मस्तिष्क का विकास भारत में आकर हुआ, युक्तियुक्त नहीं जान पड़ता। इसकी अपेक्षा यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि भारत स्थित आर्यों से ही कुछ लोग बाहर गये। वे ऐसे साधारण लोग थे जिनका सांस्कृतिक विकास साधारण स्तर का था, अतः जहाँ वे जाकर बसे वहाँ के लोगों को वे उच्च स्तर का साहित्य व संस्कृति नहीं दे सके।

३. ऋग्वेद में उपलब्ध भौगोलिक संकेतों से भी प्रतीत होता है कि आर्य लोग मूलतः पंजाब के आस-पास के रहने वाले थे।

४. यूरोप की किसी भाषा में आर्य शब्द का कोई

विकृत रूप देखने में नहीं आता। यदि वहाँ कहीं आर्य का मूल स्थान होता तो उनकी भाषा में आर्य से मिलता-जुलता कोई शब्द अवश्य होता।

५. भारत में प्रचलित 'अनारी' शब्द बड़ा ऐतिहासिक है। यह शब्द 'अनार्य' का अपभ्रंश है। जिस प्रकार आर्य शब्द सज्जन एवं शिक्षित के लिए प्रयुक्त होता है, उसी प्रकार अनार्य से बिगड़ा हुआ शब्द 'अनारी' या अनाड़ी मूर्ख, कम समझ या असभ्य के लिए प्रयुक्त होता है।

६. संस्कृत सब भारतीय भाषाओं का स्रोत है। दक्षिण भारत (जहाँ के लोगों को आर्यों के आने से पहले यहाँ के मूल निवासी बताया जाता है) की भाषाओं में भी ७५ से ९० प्रतिशत शब्द संस्कृत के हैं। यदि संस्कृत बाहर से आकर यहाँ बसनेवाले आर्यों की भाषा है तो उनके आने से बहुत पहले से बसे हुए यहाँ के मूल निवासियों की भाषा में ७५ से ९० प्रतिशत संस्कृत के शब्द कहाँ से आ गये?

#### टिप्पणी:

१. Scientists (Prof. Nagi and Prof. Zumberg of the University of Arizona) have found traces of ancient life and matter dating back to w,x®® million years. The discovery was made in rocks found in rooks found in Transaval area of South Africa, xw® K.M. north of Johansberg-The Tribune, 13th July 1975.

वेदोद्धारिणी, जुलाई-दिसम्बर १९८७ से

साभार

### आभूषण

सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है। सोने, चाँदी, माणिक, मोती, मूंगा आदि रत्नादि से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं होता क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी सम्भव है।

सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लस

## अग्नि सूक्त-४३

प्रवचनकर्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रही है। इसी श्रृंखला में ऋग्वेद के प्रथम सूक्त 'अग्नि सूक्त' की व्याख्यान माला प्रकाशित की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा कर रही हैं।

-सम्पादक

उपत्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त एमसि ॥

हम इस वेदज्ञान के प्रसंग में ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के प्रथम सूक्त की चर्चा कर रहे हैं। सातवाँ मन्त्र हमारे विचार का विषय है। इस मन्त्र का ऋषि मधुच्छन्दा है, इसका देवता अग्नि है, इसका छन्द गायत्री है और इसमें उपासना के बारे में बात की जा रही है। हमने पिछली चर्चा में देखा था कि इसमें दो बातें कही गयी हैं, जो उपासना है वो प्रतिदिन होनी चाहिए, दोनों समय होनी चाहिए। उपासना बुद्धिपूर्वक होनी चाहिए, उपासना नम्रतापूर्वक होनी चाहिए। हमारी इसी बात को 'धिया' और 'नमो भरन्त' बताने वाले दो शब्द हैं। जहाँ परमेश्वर की उपासना की बात कही गयी है, वहाँ स्तुति, प्रार्थना, उपासना इन तीन शब्दों का प्रयोग हम देखते हैं। वो उपासना धिया और नमो भरन्त इससे भिन्न है क्या? अर्थात् जो बात यहाँ कही जा रही है- धिया नमो भरन्त एमसि बुद्धिपूर्वक, नमस्कारपूर्वक तुझे प्राप्त होते हैं। तो धिया, स्तुतिपूर्वक नमो भरन्त प्रार्थना पूर्वक, एमसि उपासना करते हैं, तेरे पास आते हैं। तो पता यह लगा कि जो बात स्तुति में कह रहा है, वही बात धिया में कह रहा है और जो बात प्रार्थना में कह रहा है, वो बात नमो भरन्त में कह रहा है। तो स्तुति का अर्थ वहाँ हमने 'ज्ञान' किया था। इस बात को समझने के लिए एक उदाहरण दिया था कि जैसे वेद के जो विषय हैं उनको एक-एक शब्दों में जब हम जानते और पहचानते हैं, तो हम कहते हैं कि ऋग्वेद का विषय ज्ञान है, यजुर्वेद का विषय कर्म है, सामवेद का विषय उपासना है, अथर्ववेद का विषय विज्ञान

है और इसको ज्ञानकाण्ड, कर्मकाण्ड, उपासना काण्ड और विज्ञान काण्ड के नाम से जानते हैं। तो ऋग्वेद में ज्ञान, यजुर्वेद में कर्म, सामवेद में उपासना और अथर्ववेद में विज्ञान काण्ड है। अब तीन स्थानों पर तीन तरह के शब्द हैं, लेकिन इनके भावों में कहीं अन्तर नहीं होगा ऋग्वेद के पहले सूक्त के सातवें मन्त्र में जो बात कही जा रही है- धिया, नमो भरन्त त्वा उप एमसि। हम बुद्धिपूर्वक, ज्ञानपूर्वक, नमस्कारपूर्वक तुझे प्राप्त होते हैं। वेद का विषय कह रहा है, ज्ञान, कर्म और उपासना। अर्थात् पहले ज्ञान होगा, तदनुकूल कर्म होगा, परिणामस्वरूप उपासना हो जायेगी, उसकी निकटता आ जायेगी उसके पास पहुँच जायेंगे और यहाँ जो कहा गया है, स्तुति, प्रार्थना और उपासना। तो स्तुति एक जगह धिया है, एक जगह ज्ञान है, तो स्तुति-धिया-ज्ञान यह तीन शब्द हैं। यह तीन शब्द एकी बात को कह रहे हैं। आप उसे धिया से कहिए, आप उसे स्तुति से कहिए, आप उसे ज्ञान से कहिए। तो जैसे उपासना के लिए स्तुति पहले है। ज्ञान-कर्म-उपासना में ज्ञान पहले है और धिया नमो भरन्त एमसि में धिया पहले है। तो जो अर्थ धिया का है, स्तुति का है और ज्ञान का है वो तीनों एक ही चीज हैं। बुद्धि का सम्बन्ध भी ज्ञान से है, स्तुति का अर्थ भी ज्ञान से है। इसतरह से हमको तीन शब्द तीन स्थानों पर एक ही बात को कहते हुए दिखाई देते हैं। इससे एक बात बड़ी स्पष्ट होती है, कि उपासना जो है वो बिना ज्ञान के, बिना कर्म के नहीं होती, बिना प्रार्थना के नहीं होती। तो इस

तरह से हम अनुभव करते हैं कि जब हम स्तुति-धिया-ज्ञान कहते हैं तो उसका अभिप्राय हमारा, उस वस्तु के बारे में पूरी जानकारी से, विवेक से है, ज्ञानपूर्वक उसको प्राप्त करने की इच्छा से है।

जब दूसरे शब्द का प्रयोग करते हैं- नमो भरन्तः नमस्कार करते हुए, यहाँ है प्रार्थना करते हुए, या कर्म करते हुए तो पहले स्तुति-धिया और ज्ञान इनके अन्दर जो सामञ्जस्य है, वो कुछ-कुछ अनुभव होता है। बुद्धि का सम्बन्ध ज्ञान से है। स्तुति में वर्णन है अर्थात् जैसा हम जानते हैं वैसा बोल रहे हैं। यह भी ज्ञान है। इन तीनों स्थानों पर ज्ञान अर्थ हमारे लिए सुगम दिखाई देता है। ज्ञान कर्म उपासना में ज्ञान स्तुति-प्रार्थना-उपासना में स्तुति धिया-नमो भरन्त में धिया, बुद्धि से जुड़ा हुआ दिखाई देता है।

अब जो दूसरा शब्द है, वह तीनों ही स्थानों पर अलग-अलग है। एक स्थान पर नमो भरन्त है, एक स्थान पर प्रार्थना के रूप में है और एक स्थान पर कर्म के रूप में है। यहाँ तीसरा शब्द तीनों स्थानों पर उपासना ही है। ज्ञान कर्म उपासना में उपासना है, स्तुति-प्रार्थना- उपासना में उपासना है, त्व उप एमसि में उपासना है। हम तुझे प्राप्त होते हैं, यह उपासना है प्रार्थनापूर्वक प्राप्त हो रहे हैं, उसके बाद उपासना है। कर्म से प्राप्त कर रहे हैं, यह उपासना है। तो पहले और तीसरे शब्द में हमें कोई सन्देह नहीं है। अन्त बीच के शब्द में है, जो तीन स्थानों पर, तीन रूपों में आया है। हम ऋग्वेद के मन्त्र को देखते हैं, तो नमो भरन्त, स्तुति प्रार्थना-उपासना में देखते हैं तो प्रार्थना के रूप में : ज्ञान-कर्म-उपासना में कर्म के रूप में देखते हैं। तो एक बात दोनों ओर से सहज प्रतीत होती है कि उपासना सबका परिणाम है कि ज्ञान सबका प्रारम्भ है। तो जो कुछ हम बीच में कर रहे हैं वो भी एक ही है। वो कर्म कर रहे हैं तो भी प्रार्थना है, प्रार्थना कर रहे हैं तो भी कर्म है और कर्म व प्रार्थना दोनों कर रहे हैं तो भी नमस्कार, नम्रता का भाव है। प्रार्थना में नम्रता का भाव सहज दिखाई देता है। जब किसी से भी हम प्रार्थना करते हैं, तो उसमें नम्रता स्वाभाविक सम्मिलित होती है। अब एक शब्द का अन्तर रहता है कि कर्म भी प्रार्थना का ही भाग है। प्रार्थना का भाग कैसा है- जब कोई

किसान प्रार्थना करता है, भगवान् मुझे बहुत अन्न देना, तो वह बहुत अन्न क्या केवल बोलने से प्राप्त किया जा सकता है, या भगवान् के नाम चिट्ठी लिखने से मिल सकता है। वो बहुत अन्न तो खेती में प्रयत्न करने से, पुरुषार्थ करने से मिल सकता है। तो वह मेरी जो प्रार्थना है, वो कर्म से जुड़ी हुई है। कर्म भी उस प्रार्थना का अंगभूत है। कर्म के बिना मेरी प्रार्थना अधूरी है। प्रार्थना कभी मैं मन से करता हूँ, कभी हाथ जोड़ करता हूँ, कभी प्रार्थना लिखकर करता हूँ। मैं प्रार्थना कभी उस काम को करके करता हूँ। वह काम भी मेरी प्रार्थना का भाग बनता है। तो वह प्रार्थना कर्म से भिन्न नहीं है।

इस तरह से, स्तुति-ज्ञान-बुद्धि। धिया हुआ, प्रार्थना-कर्म-नमो भरन्त एक ही भाव हुआ और उपासना एवं त्वा उप एमसि में भी उपासना। तो यह बात निश्चित और दृढ़ता से कही जा सकती है कि उपासना का तो प्रकार यही है, जिसमें पहले ज्ञान हो, फिर नम्रतापूर्वक कर्म हो और जिसका परिणाम हमारे पास उपासना के रूप में प्राप्त हो। स्तुति-प्रार्थना-उपासना का अर्थ करते हुए ऋषि दयानन्द कहते हैं कि स्तुति से परमेश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव का पता लगता है। गुण-कर्म-स्वभाव को जानने से उसके अन्दर प्रेम पैदा होता है, उसके गुण-कर्म-स्वभाव का अनुकरण करने की इच्छा होती है, स्वामी जी महाराज कहते हैं कि स्तुति करने से प्रीति होती है और उस जैसा बनने की प्रेरणा मिलती है। उस प्रेरणा से हम आगे बढ़ पाते हैं। तो ज्ञान से हमको प्रेरणा मिलती है। बुद्धि से भी जब हमको जम जाता है, अच्छा लगता है तो उससे प्रेरणा मिलती है। तो ज्ञान से हमारे अन्दर वस्तु के प्रति उत्पन्न होता है, आदर भाव उत्पन्न होता है और वो आदर भाव प्रकाशित होता है हमारे नमस्कार से, हमारी प्रार्थना से, हमारे कर्म से। तो आदर भाव जब मैं आसन बिछाता हूँ, तो आसन बिछाने रूप क्रिया से मेरे अतिथि के प्रति मेरे अन्दर विद्यमान आदर भाव का प्रकाशन होता है। मैं उसे जब भोजन कराता हूँ, पानी देता हूँ, कोई वस्तु भेंट करता हूँ तो मेरा वह करना, मेरे अन्दर की जो नम्रता है उसे प्रकाशित करता है। वह मेरी प्रार्थना का ही भाग होता है। मैं काम करता हूँ, वह भी मेरी प्रार्थना का भाग होता है, मैं बोलता



हूँ, वह भी मेरी प्रार्थना का भाग होता है, मैं केवल हाथ जोड़ता हूँ, यह भी मेरी प्रार्थना का भाग होता है। याचना की दृष्टि भी मेरी आँखां में प्रार्थना का भाव पैदा कर देती है, मेरी अकिंचनता, मेरी निराश्रयता, मेरी दरिद्रता, मेरी साधनहीनता का भाव जब मैं प्रकाशित करता हूँ, तब निश्चित रूप से मैं प्रार्थना ही कर रहा होता हूँ। तो इस तरह से प्रार्थना हमारे अन्दर उपासना की स्वाभाविक प्रक्रिया है। इसमें एक और विशेष बात है जो स्वामी जी महाराज लिखते हैं, प्रार्थना करने से निराभिमानता आती है, सहाय का मिलना। अर्थात् प्रार्थना जब हम करते हैं तो जो हमारी असहायता है, असमर्थता है, हमारी जो दुर्बलता है, उसका हमें बोध होता है, उसकी पूर्ति की हमारे अन्दर इच्छा होती है। हमारे अन्दर जो कमी है, उसे दूर करने का हमारे अन्दर यत्न होता है, जिसको हमने प्रार्थना नाम दिया है। वो प्रार्थना यदि स्वीकृत हो जाए तो निश्चित रूप से हमारे अन्दर की जो दुर्बलता है वो अपने आप समाप्त हो जाती है। इसलिए ऋषि कहते हैं कि प्रार्थना करने से दो काम होते हैं—निराभिमानता होती है और सहाय का मिलना होता है। किसी की सहायता मिलती है तो स्वाभाविक रूप से मन में उत्साह बढ़ जाता है। जब कोई व्यक्ति मेरी प्रार्थना स्वीकार कर लेता है तो मेरे मन में दोगुना उत्साह आ जाता है। कोई व्यक्ति मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर लेता है, मेरी विषम परिस्थितियों में सहायता कर देता है, वो मेरी सहायता पैसे से कर सकता है, उपस्थिति से, बल से कर सकता है। वो किसी भी रूप में मेरी सहायता करता है, मेरी प्रार्थना के परिणामस्वरूप करता है, मेरी प्रार्थना का अंग हो कर करता है। प्रार्थना के द्वारा हम अपनी न्यूनता की पूर्ति करते हैं, इसका अर्थ है सहाय का मिलना। प्रार्थना से निराभिमानता आती है, क्योंकि जब व्यक्ति प्रार्थना करता है तो अभिमान उसमें रह नहीं सकता। जो प्रार्थी है, याचक है उसके अन्दर अहंकार की सम्भावना नहीं होती। उपासक जब प्रार्थना करने लगता है, परमेश्वर को अपने से बड़ा मानता है, तब उसकी प्रार्थना, उसके अन्दर से अभिमान को नष्ट कर देती है, अहंकार को समाप्त कर देती है। तो इस तरह से प्रार्थना

करने से, नमस्कार करने से सहाय का मिलना होता है, अधूरा काम का पूरा होना और हमारे अन्दर निराभिमानता पैदा होती है।

इसीलिए हमारे यहाँ प्रार्थना के रूप में एक भिक्षुक से यह आशा की जाती है कि वह भिक्षा माँगे। भिक्षा माँगने में बहुत लोग बड़ा संकोच करते हैं, लेकिन यह तभी तक रहता है जब तक उनके अन्दर अहंकार बचा हुआ है और जिस क्षण वह अहंकार समाप्त हो जाता है, उसके अन्दर जो सहज परिस्थिति पैदा होगी, वो विनीत भाव की होगी, नम्रता की होगी, वो प्रार्थना की होगी, तो वह जो नम्रता, प्रार्थना का भाव है वो हमारे अन्दर बना रहे तब हमें उपलब्धि होती है—सहाय का मिलना। जो चीज हमारे पास नहीं है, प्रार्थना से वह हमें मिल सकती है, उस प्रकार का व्यवहार, कर्म करने से हमें मिल सकती है तो इस तरह से हम मन्त्र में जो तीन शब्द हमारे सामने आए उनमें धिया, नमो भरन्त, त्वा उप एमसि, तो परमेश्वर की उपासना करने के लिए जो समय बताया, जो स्थान बताया और जो काल बताया, उनके साथ यह तीनों चीजें जुड़ी हुई रहती हैं। अर्थात् वह उपासना काल तभी उपासना काल रहता है, जब जो काम हम कर रहे हैं उसी के लिए, उसी के निमित्त कर रहे हैं और उसी को पहुँच रहा है।

हम किस की बलि देने को यदि उपासना कहते हैं तो हम काम भी कर रहे हैं, समय से भी कर रहे हैं, लेकिन परमेश्वर तक नहीं पहुँच रहा है। इसलिए इस उपासना का कोई अर्थ नहीं होता, हमारी उपासना का जो अर्थ है, उस कार्य की सिद्धि उस रूप में हमें प्राप्त होती है तो उसका उद्देश्य तब पूरा होता है।

इस दृष्टि से जब बात कही गयी तो उपासना, प्रार्थना और स्तुति तो मन्त्र में धिया, नमो भरन्त, त्वा उप एमसि के द्वारा हमने परमेश्वर से प्रार्थना की, कि हे परमेश्वर हम ज्ञानपूर्वक, नमस्कारपूर्वक अर्थात् श्रेष्ठ कार्य करते हुए, तुझे श्रेष्ठ मानते हुए, तेरा अनुकरण करते हुए, हम तुझ तक प्राप्त होते हैं। तो यह प्रार्थना हमारे अन्दर निराभिमानता, उत्साह को पैदा करती है, इसलिए यहाँ नमो भरन्त कहा गया है।

## ॥ सत्यम् ब्रह्म ॥

उपाध्याय डॉ. रामनारायण शास्त्री

बृहदारण्यकोपनिषद् में सत्य को ब्रह्म कहा है। सत्य को ब्रह्म क्यों कहा और किन कारणों से कहा? इस पर विचार करने से पूर्व हम यह जानना अधिक उपयुक्त मानते हैं कि यह बृहदारण्यकोपनिषद् क्या है? इस प्रश्न के आते ही कि बृहदारण्यकोपनिषद् क्या है, आप सबका उत्तर है कि हम सब जानते हैं। प्रसिद्ध एकादशोपनिषदों में एक उपनिषद् बृहदारण्यकोपनिषद् है और वह इन एकादश=ग्यारह उपनिषदों में हर दृष्टि (आकार प्रकार और ज्ञानगरिमा की दृष्टि) से बृहद् बड़ी है। आपका ज्ञान सत्य है पर हम जो जानना चाहते हैं वह यह है कि सभी ब्राह्मणग्रन्थ तथा आरण्यकग्रन्थ किसी न किसी एक वेद के साथ सम्बद्ध हैं। यथा- ऐतरेयब्राह्मण, ऐतरेयारण्यक, शाङ्खायनब्राह्मण शाङ्खायनारण्यक ऋग्वेद से सम्बद्ध हैं। इसी प्रकार शुक्लयजुर्वेद की दोनों शाखाओं (माध्यन्दिनशाखा तथा काण्वशाखा) के माध्यन्दिनशतपथ ब्राह्मण और काण्व- शतपथ ब्राह्मण नाम से दोनों ब्राह्मण ग्रन्थ उपलब्ध हैं और कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीयशाखा का तैत्तिरीयब्राह्मण भी प्राप्त है। ये सभी प्रसिद्ध एकादशोपनिषद् किसी न किसी ब्राह्मण अथवा आरण्यकग्रन्थ का एक भाग हैं, उसी प्रकार जैसे कि महाभारत का एकभाग विदुरनीति<sup>१</sup> और एक भाग भगवद्गीता<sup>२</sup> के नाम से पृथक् ग्रन्थ के रूप में प्रसिद्ध हैं। माध्यन्दिनशतपथ और काण्वशतपथ दोनों ही ब्राह्मणग्रन्थों का अन्तिम भाग बृहदारण्यक नाम से प्रसिद्ध है। बृहदारण्यकोपनिषद् नाम से जो उपनिषद् प्रसिद्ध है वह काण्वशतपथ ब्राह्मण का सत्रहवाँ काण्ड यथावत् उपनिषद् है। इस उपनिषद् का कुछ भाग विश्वविद्यालयों के अधिस्तातक तथा स्नातक पाठ्यक्रमों में भी निर्धारित है। अस्तु।

**सत्यम्-** अस्तीति सत्। होना (अस्तित्व=सत्ता)

अर्थवाले अस् (अस् भुवि) धातु से शतृप्रत्यय करने पर सत् शब्द बनता है<sup>३</sup>। यहाँ “शनसोरल्लोपः” से अस् धातु के अकार का लोप हुआ है।<sup>४</sup> सत्सु भवम् सत्यम् “भवे छन्दसि”<sup>५</sup> सूत्र से यत् प्रत्यय अथवा सत्सु साधुः सत्य “तत्र साधुः”<sup>६</sup> सूत्र से यत् प्रत्यय करने पर नपुंसकलिङ्ग में सत्यम् पद बनता है। यतोऽनाव सूत्र से आद्युदात्त प्राप्त होने पर “सत्यादशपथे” से अन्तोदात्त है।<sup>७</sup> निघण्टु में यह पद उदकनामों में पठित है।<sup>८</sup> निघण्टु में छह पद सत्यनाम से पठित हैं पर वहाँ यह सत्यम् पद नहीं है।<sup>९</sup> वेद में सत्यम् पद अनेकत्र उपलब्ध होता है।<sup>१०</sup> सर्वत्र (निघण्टु व वेद में) यह पद अन्तोदात्त ही पठित है। महर्षि यास्क सत्य शब्द की निष्पत्तिः अस और इण् धातु से मिलाकर मानते हैं। एते कारितं च यकारादिं चान्तकरणमस्तेः शुद्धं च सकारादि च।<sup>११</sup> तथा अन्यत्र लिखते हैं सतों में सज्जनों में विस्तार पाता है और सत् से उत्पन्न होता है इसलिए सत्य सत्य है। सत्यं कस्मात्? सत्सु तायते सत्प्रभवं भवतीति वा।<sup>१२</sup>

**ब्रह्म-** वृद्धि और शब्द अर्थवाले बृहि (बृहि वृद्धौ बृहि शब्दे च) धातु से औणादिक मनिन् प्रत्यय करने पर ब्रह्मन्शब्द बनता है।<sup>१३</sup> नपुंसकलिङ्ग प्रथमा एकवचन में ब्रह्मपद बनता है। मनिन् प्रत्यय के नित् होने के कारण ब्रह्म शब्द आद्युदात्त है।<sup>१४</sup> निघण्टु में ब्रह्मपद उदक अन्न और घननामों में पठित है।<sup>१५</sup> तथा सर्वत्र आद्युदात्त है। महर्षि यास्क ने निरुक्त में ब्रह्म को सब तरह से सब ओर से बड़ा हुआ लिखा है- ब्रह्म परिवृढं सर्वतः।<sup>१६</sup> धात्वर्थ के आधार पर ब्रह्म का अर्थ बड़ा है, महान् है, शब्दवाला है या शब्दस्वरूप है, इसीलिए ब्रह्म का अर्थ वेद और परमेश्वर दोनों हैं। महाभारतकार महर्षि व्यास भी इस तथ्य को स्वीकारते हैं द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परञ्च यत्। शब्दे ब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति॥ सत्य

तथ्य यह है कि इस सम्पूर्ण चराचर में परमपिता परमात्मा से महान् बड़ा कोई नहीं है अतएव ब्रह्म शब्द ईश्वर का वाचक है। उणादि सूत्रपाठ की वृत्ति में स्वामी दयानन्द सरस्वती ब्रह्मशब्द को इस प्रकार परिभाषित करते हैं— बृंहति वर्धते तद् ब्रह्म ईश्वरो वेदस्तत्त्वं तपो वा।<sup>१७</sup> सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास में ईश्वर के सौ नामों की व्याख्या करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ब्रह्मशब्द को भी परिगणित किया है। बृहत्वाद ब्रह्म=सबसे बड़ा होने से ब्रह्म ईश्वर का नाम है। बृह बृहि वृद्धौ इन धातुओं से ब्रह्मशब्द सिद्ध होता है, जो सबके ऊपर विराजमान सबसे बड़ा, अनन्तबलयुक्त परमात्मा है वह ब्रह्म है।<sup>१८</sup>

**सत्यम् ब्रह्म**— सत्य को ब्रह्म लिखते हुए बृहदारण्यक का ऋषि कहता है यह जो हृदय है उसी में आकर सत्य बैठा हुआ है, यह सत्य ही ब्रह्म है, यह “सत्यब्रह्म” महान् है, पूजनीय है, सर्वप्रथम प्रकट होने वाला है जो प्राणिमात्र के हृदय में निवास करने वाले सत्यब्रह्म को जानता है, वह इन लोकों जीत लेता है, जो इस महान् पूजनीय सर्वप्रथम प्रकट होने वाले सत्यब्रह्म को असत् मानता है वह पराजित हो जाता है। सत्य ब्रह्म है, सत्य ही ब्रह्म है तद्वै तदेव तदास सत्यमेव स यो हैतं महद् यक्षं प्रथमजं वेद सत्यम् ब्रह्मेति जयतीमाँल्लोन्ः जित इन्वसावसद् य एवमेतं महद् यक्षं प्रथमजं वेदः सत्यं ब्रह्मेति सत्यं ह्येव ब्रह्म।<sup>१९</sup> छान्दोग्योपनिषद् का कथन है कि यह अमृत है, अभय है, यही ब्रह्म है, इसी ब्रह्म का नाम सत्य हैः एतदमृतमभयमेतद् ब्रह्मेति तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति।<sup>२०</sup> बृहदारण्यक तथा छान्दोग्योपनिषद् के उपर्युद्धृत वाक्य में सत्यं ब्रह्म सत्यं ह्येव ब्रह्म एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति कहकर सत्य को ब्रह्म कहा है।

सत्य को ब्रह्म कहने के कारण पर विचार करते हुए हम यह जानने का प्रयत्न कर रहे हैं कि ब्रह्म जिसको साधारणजन परमपिता परमेश्वर के रूप में जानते हैं वह कहाँ रहता है? उसके निवास स्थान का ज्ञान हो जाने पर

सत्य को ब्रह्म कहने का कारण सरलता से ज्ञात हो जायेगा। सर्वसाधारण जानता है तथा शास्त्रीय प्रमाण भी है कि ब्रह्म सर्वव्यापक है। वह ब्रह्माण्ड के कण-कण में रहने के साथ ही प्राणिमात्र के हृदय में रहता है, हृदय में प्रतिष्ठित है। श्रीमद्भगवद्गीता का कथन है कि ईश्वर सभी भूतों के, प्राणियों के हृदय में रहता है— ‘ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति’<sup>२१</sup> शाङ्खायनारण्यक का स्पष्ट कथन है कि आत्मा हृदय में आश्रय निवास बनाये हुए है और ब्रह्म आत्मा में प्रविष्ट है ‘आत्मा हृदये श्रितः’<sup>२२</sup> आत्मनि ब्रह्म प्राविशत्।<sup>२३</sup> इनके अतिरिक्त उपनिषदों के भी अनेक प्रमाण हैं। यथा अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽन्तरात्मा सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः।<sup>२४</sup> अणोरणीयान् महतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः।<sup>२५</sup> आत्मा, ब्रह्म ईश्वर का निवासस्थान हृदय है। सत्य भी हृदय में आकर बैठा हुआ है जैसा कि बृहदारण्यकोपनिषद् के प्रथम वाक्य से ही स्पष्ट है। वैदिक वाङ्मय उस सब को ब्रह्म कहता है जो हृदय में रहता है चाहे वह सत्य हो, मन हो, चक्षु हो, प्रणव (ओ३म्) हो प्रजापति हो अथवा प्राण हो।<sup>२६</sup> इस भाँति सत्य को ब्रह्म कहने का एक कारण समझ में आया कि यह हृदय में रहता है इसलिए ब्रह्म है। जो तथ्य सत्य होता है वह तत्काल हृदय को छू लेता है हृदय में घर कर लेता है हृदय में बस जाता है ऐसा ही लोकव्यवहार में भी सर्वप्रसिद्ध है।

सत्य ब्रह्म सत्यब्रह्म और हृदय में परस्पर तादात्म्य सम्बन्ध है और आधाराधेय सम्बन्ध भी है। अब हम इन तीनों की- सत्य हृदय और ब्रह्म की कुछ समता को देखने समझने का प्रयास करते हैं, जिसका व्याख्यान ब्राह्मणग्रन्थ कर रहे हैं। सत्य- यह जो सत्य है यह आपः अर्थात् सर्वत्र व्याप्त होने वाली अव्यक्त प्रकृति से व्यक्त अवस्था में आते हुए प्रकट हुआ। सत्य से ब्रह्म, ब्रह्म से प्रजापति और प्रजापति से देव प्रकट हुए। वे सभी देव सत्य की ही उपासना करते हैं। इसका अभिप्राय है

कि सृष्टि के प्रारम्भ में 'आप' ही थे। आपः अर्थात् सर्वत्र व्याप्त हो रही अव्यक्त प्रकृति ही थी। प्रकृति जब अव्यक्त से व्यक्त अवस्था में आने लगी तब सत्य प्रकट हुआ। अव्यक्त में भी सत्य रहता है, परन्तु अव्यक्त में अव्यक्तरूप से रहता है। व्यक्त में व्यक्तरूप में प्रकट होता है। सत्य के प्रकट होने पर ब्रह्म प्रकट हुआ। अर्थात् जब तक सत्यरूप विश्व के नियम अव्यक्त जगत को व्यक्त करने के लिए क्रियाशील नहीं होते तब तक ब्रह्म भी अव्यक्त अप्रकट ही रहता है। सत्यरूप नियम जब प्रकट होने लगते हैं, तब अप्रकट ब्रह्म मानो प्रकट हो जाता है। ब्रह्म के प्रकट होने पर प्रजापति प्रकट हुआ। वही आधारभूत सत्यशक्ति जो ब्रह्मरूप में प्रकट हुई थी, अब प्रजापतिरूप में प्रकट हुई, अर्थात् विश्व का निर्माण तथा प्रजाओं का पालन-पोषण होने लगा। प्रजापति के प्रकट होने पर देव प्रकट हुए अर्थात् जब विश्व का निर्माण प्रारम्भ हुआ तब दिव्यगुणों को उत्पन्न किया गया, क्योंकि निर्माण की पूर्णता दिव्यगुणों के प्रकट होने में ही है। इन दिव्यगुणों का प्रारम्भ 'सत्य' से ही है, देव सत्य की ही उपासना करते हैं सत्य की ही शक्ति सब दिव्यगुणों को दिव्यगुण बनाती है। 'आप एवेदमग्र आसुस्ता आप सत्यमसृजन्त सत्यं ब्रह्म ब्रह्म प्रजापतिं प्रजापतिर्देवास्ते देवाः सत्यमेवोपासते'।<sup>१७</sup>

**सत्य-** सत्य इसमें तीन अक्षर हैं स पहला अक्षर है त् दूसरा अक्षर है य तीसरा अक्षर है। इनमें प्रथम अक्षर से और तृतीय अक्षर य में स्वर है; अतः ये दोनों सस्वर हैं सत्य है अविनाशी है। इनके मध्य में त् है इसमें स्वर नहीं है, अतः स्वरहीन होने से अनृत है विनाशी है। यह अनृत 'त्' मानो दोनों ओर से स और य रूपी सत्य से बंधा हुआ है अर्थात् यह अनृतरूपा प्रकृति सत्यरूप ब्रह्म तथा जीव से जकड़ी हुई है और क्योंकि सत्य ने इसे दोनों ओर पकड़ रखा है इसलिए यह अनृत होती हुई भी सत्यरूप ही हो रही है। जो इस रहस्य को जान लेता है उसे अनृत नहीं मार सकता। तदेतत् त्र्यक्षरं सत्यमिति स

इत्येकमक्षरं तीत्येकमक्षरं यमित्येकमक्षरं प्रथमोत्तमे अक्षरे सत्य मध्यतोऽनृतं तदेतदनृतमुभयतः सत्येन परिगृहीत सत्यभूयमेव भवति नैव विद्वांसमनृतं हिनस्ति।<sup>१८</sup> छान्दोग्योपनिषद् में भी तीन अक्षरवाले सत्यशब्द की व्याख्या प्राप्त होती है जो इस प्रकार है। सत्य में सत्+ति+यम ये तीन अक्षर हैं। यह जो सत् है यह अमृत है अर्थात् ब्रह्म का द्योतक है। यह जो ति है, यह मर्त्य है अर्थात् जगत् का द्योतक है। जो यम् है यह दोनों को मिलाने का सूचक है, क्योंकि इसमें दोनों की प्राप्ति होती है अमृत तथा मर्त्य की, इसलिए यम् दोनों का बन्धक है। जो व्यक्ति दिनोंदिन (अहर्निश) निरन्तर सत्य के इस रहस्य को जानता है, अमृत और मर्त्य का ब्रह्म और जगत् का समन्वय करके चलता है जगत् में ब्रह्म के और ब्रह्म में जगत् के दर्शन करता करता है वह मानो स्वर्गलोक को प्राप्त कर लेता है। तानि ह या एतानि त्रीण्यक्षराणि सत्तियमिति। तद् यत् सत् तदमृतमथ यत् ति तन्मर्त्यमथ यद् यम् तेनोमे यच्छति यदनेनोभे यच्छति तस्माद् यमहरहर्वा एवंवित स्वर्ग लोकमेति।<sup>१९</sup>

**हृदय-** हृदय शब्द में तीन अक्षर हैं हृ ह और य यह तीन अक्षरों वाला हृदय ही प्रजापति है, हृदय ही ब्रह्म है, हृदय ही सबकुछ है। हृ यह एक अक्षर है। हृज् हरणे धातु से बना है, इसका अर्थ है हरण=अभिहरण लाना जो इस रहस्य को समझ लेता है कि हृदय ही प्रजापति है, हृदय ही ब्रह्म है, हृदय ही सबकुछ है। उसके सामने अपने और पराये सभी उपहार लाकर रखते हैं। द-यह दूसरा अक्षर है। यह दा दाने धातु से बना है, इसका अर्थ है देना। जो यह समझ लेता है कि हृदय ही प्रजापति है, हृदय ही ब्रह्म है, हृदय ही सबकुछ है, सबलोग उसे देते ही देते हैं। य-यह तीसरा अक्षर है। 'इण् गतौ' अथवा 'या गतिप्रापणयोः' धातु से बना है, इसका अर्थ है जाना प्राप्त करना। जो हृदय सम्बन्धी इस रहस्य को जान लेता है वह स्वर्गलोक को पहुँच जाता है अर्थात् स्वर्गलोक को पा लेता है। एष प्रजापतिर्यद् हृदयमेतद् ब्रह्मैतत् सर्वम्

तदेतत् त्र्यक्षरं हृदयमिति । ह इत्येकमक्षरमभिरन्त्यस्मै स्वाश्वान्ये च य एवं वेद । द इत्येकमक्षरं ददत्यस्मै स्वाश्वान्ये च य वेद यमित्येकमक्षरमेति स्वर्गं लोकं य एवं वेद ।<sup>३०</sup>

**ब्रह्म**- यह तीन अक्षरों वाला शब्द है । इसमें पहला अक्षर ब्र है । दूसरा अक्षर है ह और तीसरा अक्षर है म । यह अक्षर बृहि उद्यमने और बृहि वृद्धौ धातु से बना है, अतः इसका अर्थ है उद्यम परिश्रम और वृद्धि परिश्रम करने से ही कोई भी बड़ा होता है, महान् होता है । ब्रह्म ने उद्यम श्रम परिश्रम किया तभी यह ब्रह्माण्ड बना, इसीलिए वह ब्रह्म है, बड़ा है, महान् है । ह-यह अक्षर ओहाड गतौ और ओहाक त्यागे धातु से बना है । इसका अर्थ है गति और त्याग । ब्रह्म स्वयं गतिमान् है । संसार को, संसार के प्रत्येक कण को गतिमान बनाता है । भूतमात्र को गति देकर छोड़ देता है अर्थात् उसके प्रति आसक्ति नहीं रखता । उसे कर्म करने के लिए स्वतन्त्र कर देता है । म-यह अक्षर माङ् माने धातु से बना है । इसका अर्थ है मान अर्थात् प्रमाण=माप तोल निर्माण । ब्रह्म संसार को बनाकर स्वतन्त्र करके उसे देखता रहता है उसकी माप तोल करता रहता है और इसी माप=तोल प्रमाण के आधार पर जीवों के कर्मों का परिणाम देता है, फल देता है । जो इस रहस्य को जान लेता है समझ लेता है वह ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है । इन्हीं सब कारणों से ब्रह्म, ब्रह्म कहलाता है । उसका प्रत्येक कार्य सत्य है इसलिए ब्रह्म सत्य है, ब्रह्म का नाम सत्य है ।

सत्य ब्रह्म है इसी कारण देव ब्रह्म की, सत्य की, सत्यब्रह्म की उपासना करते हैं । ऋत और सत्य एक ही है । ऋत सत्य है सत्य ऋत है । सत्य ब्रह्म है । ऋत ब्रह्म है ।<sup>३१</sup> यह तथ्य भी वैदिक वाङ्मय में उपलब्ध होता है । यजुर्वेद के बारहवें अध्याय के चौदहवें ( १२/१४ ) मन्त्र में आये 'ऋतं बृहत्' का व्याख्यान करते हुए शतपथ ब्राह्मण कहता है- 'ऋतमिति सत्यमित्येतत् ।'<sup>३२</sup> अन्यत्र भी 'सत्यं वा ऋतम् ।'<sup>३३</sup> ऋतमित्येष वै सत्यम्<sup>३४</sup> ये वाक्य

प्राप्त हैं । साक्षाद् वेद में भी ऋत को सत्य कहते हुए ऋत और सत्य दोनों को अग्नि कहा है 'ऋतं सत्यमृतं सत्यमग्निम् ।'<sup>३५</sup> यजुर्वेदीय इस वाक्य को स्पष्ट करते हुए शतपथब्राह्मण कहता है- "अयं वा अग्निर्ऋतमसावादित्यः सत्यं यदि वासावृत्तमयं सत्यमुभयं वेतदयमग्निस्तस्मादाहर्तं सत्यमृतं सत्यमिति ।"<sup>३६</sup> यह भी स्मरण रहे कि अग्नि ऋत सत्य के साथ ब्रह्म भी है । 'अग्निरेव ब्रह्म ।'<sup>३७</sup> 'ब्रह्म वा अग्निः ।'<sup>३८</sup> 'ब्रह्माग्निः ।'<sup>३९</sup>

वैदिकवाङ्मय में ओ३म् को भी सत्य कहा गया है ओ३मिति सत्यम् ।<sup>४०</sup> तदेतत्सत्यमक्षरं यदोमिति ।<sup>४१</sup> तस्मादो३मित्येव प्रतिगृणीयात् तदिध सत्यं तद् देवा विदुः ।<sup>४२</sup> जहाँ ओ३म् को सत्य अथवा सत्य को ओ३म् कहा है वहीं ओ३म् साक्षात् ब्रह्म है यह भी स्पष्ट है- ओ३म् खं ब्रह्म । ओ३मिति ब्रह्म ।<sup>४३</sup> ओ३मितीद सर्वम् ।<sup>४४</sup> जो सत्य ब्रह्म है ओ३म् है जिस सत्य की देव ब्रह्म या ओ३म् के रूप उपासना करते हैं वही सत्य त्रयी विद्या है- 'तद्यत्सत्यम् त्रयी विद्या सा ।'<sup>४५</sup> ऋग्यजुसाम त्रयी विद्या है 'अथाह स्तोमश्च यजुश्च ऋक्च साम च बृहच्च रथन्तरञ्चेति त्रयी हैषा विद्या ।'<sup>४६</sup> 'त्रयी वै विद्या ऋचो यजूषि सामानि ।'<sup>४७</sup> भूर्भुवः स्वः इन व्याहृतियों को भी त्रयी विद्या कहा गया है- भूर्भुवस्स्वरिति सा त्रयीविद्या ।<sup>४८</sup> एवमेवैताः । भूर्भुवः स्वरिति व्याहृतयस्त्रययै विद्यायै संश्लेषिण्यः ।<sup>४९</sup> शतपथ ब्राह्मण ब्रह्म को त्रयीविद्या कह रहा है- 'स ( प्रजापतिः ) श्रान्तस्तेपानो ब्रह्मैव प्रथममसृजत त्रयीमेव विद्याम् ।'<sup>५०</sup> ब्राह्मणग्रन्थों का समझने समझाने का प्रकार बहुत ही निराला है । जब सत्यब्रह्म की चर्चा चल रही है ओम् ब्रह्म है, सत्य ब्रह्म है, सत्य त्रयीविद्या है, भूर्भुवः स्वः त्रयीविद्या है तब ऋग्वेदीय ऐतरेयब्राह्मण इन सबको परस्पर सम्बद्ध करते हुए कहता है यह सब मिलकर ओ३म् है- 'तेभ्यस्तप्तेभ्यः ( वेदेभ्यः ) त्रीणि शुक्राण्यजायन्त भूरित्येव ऋग्वेदादजायत भुव इति यजुर्वेदात्स्वरिति सामवेदात् तानि शुक्राण्यभ्यतपत् तेभ्योऽभि तप्तेभ्यस्त्रयो वर्णा अजायन्ताकार उकार मकार इति

तानेकधा-समभरत् तदेतदोऽमिति ।<sup>११</sup>

देव सत्य की उपासना करते हैं अर्थात् सत्य का आचरण करते हैं यानि अपने जीवन के क्रियाकलाप में सत्य को व्यावहारिक रूप देते हैं और यह सत्याचरण, सत्यव्यवहार ही धर्म कहलाता है अतः शास्त्र सत्याचरण करने वाले को धर्माचारी तथा धर्माचरण करने वाले को सत्याचरण करनेवाला, सत्यवादी कहता है- यो वै स धर्मः सत्यं वै तत् तस्मात् सत्यं वदन्तमाहुर्धर्मं वदतीति धर्म वा वदन्तं सत्यं वदतीत्येतदिध एवैतदुभयं भवति ।<sup>१२</sup>

यह जो सत्य है यह व्रत का रूप है एतत् खलु वै व्रतस्य रूपं यत् सत्यम् ।<sup>१३</sup> देव जो सत्य की उपासना करते हैं उसका अर्थ यही है कि देव सत्य को व्रत के रूप में स्वीकारते हैं, उसका वरण करते हैं कि हम सत्याचरण ही करेंगे यह हमारा व्रत है। एकं ह वै देवा व्रतं चरन्ति सत्यमेव ।<sup>१४</sup> एकं ह वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यं तस्माद् सत्यमेव वदेत् ।<sup>१५</sup> इसीलिए यजुर्वेद के प्रारम्भ में व्रतो के स्वामी अग्नि से सत्यब्रह्म की अर्थात् सत्याचरण की प्रार्थना है। मैं व्रत का आचरण करूँगा आपकी कृपा से मैं व्रतपालन में समर्थ हो सकूँ तथा मेरा व्रत सिद्ध होवे। मेरा व्रत है कि मैं अनृत को छोड़कर सत्य के पास आता हूँ, सत्य की उपासना करता हूँ- 'अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ।<sup>१६</sup> इस मन्त्र को स्पष्ट करते हुए शतपथ ब्राह्मण कहता है अग्नि ही देवों का व्रतपति है अग्निर्व देवानां व्रतपतिः ।<sup>१७</sup> अग्निर्व देवानां व्रतभृत् ।<sup>१८</sup> इस संसार में सत्य और अनृत दो ही हैं तीसरा नहीं, देव सत्य हैं और मनुष्य अनृत हैं इसलिए मैं अनृत को छोड़कर सत्य को प्राप्त होता हूँ अर्थात् मनुष्यों से हटकर देवों को प्राप्त करता हूँ- 'द्वयं वा इदं न तृतीयमस्ति। सत्य चैवानृतं च सत्यमेव देवा अनृतं मनुष्या इदमहमनृतात्सत्यमुपैमीति तन्मनुष्येभ्यो देवानुपैति ।<sup>१९</sup> इस सत्याचरण के कारण ही वैदिकवाङ्मय में देवों को अनेकत्र सत्यमय कहा गया है- सत्यसंहिता वै देवाः ।<sup>२०</sup> सत्यमया उ देवाः ।<sup>२१</sup> देव

सत्याचरण के कारण यशस्वी हैं इसलिए सत्याचरण अथ च सत्यब्रह्म की उपासना से यह भी यशस्वी बनना चाहता है। यह सत्यवादिता अथवा सत्यव्रत का फल है। एतद् ह वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यं तस्मात्ते यशो यशो ह भवति य एवं विद्वान् सत्यं वदति ।<sup>२२</sup>

सत्याचरण सत्यवादिता अथवा सत्यब्रह्म की उपासना का यह भी फल है कि जैसे जलते हुए अग्नि को घी से सींचने पर अग्नि निरन्तर तेज होता है वैसे सत्याचरण करने वाले सत्य बोलने वाले व्यक्ति का तेज निरन्तर बढ़ता है और तेजस्वी होने के साथ श्रेयवाला भी होता है। इसके विपरीत जैसे जलते हुए अग्नि को जल से सींचने पर अग्नि का तेज घटता है और वह पूरी तरह निस्तेज हो जाता है वैसे ही अनृतवादी व्यक्ति का तेज निरन्तर क्षीण होता रहता है और वह पापी बन जाता है, अधोगति को प्राप्त करता है, पतित हो जाता है। इसलिए सदा सत्य ही आचरण करना चाहिए सत्य ही बोलना चाहिए। सत्यमेवोपचारः। स यः सत्यं वदति यथाऽग्निं समिद्धं तं घृतेनाभिषिञ्चेदेवं हैनं स उददीपयति तस्य भूयो भूय एव तेजो भवति श्वः श्वः श्रेयान् भवत्यथ योऽनृतं वदति यथाऽग्निं समिद्धं तमुदकेनाभिषिञ्चेदेवं हैनं स जासयति तस्य कनीय कनीय एवं तेजो भवति श्वः श्वः पापीयान् भवति तस्माद् सत्यमेव वदेत् ।<sup>२३</sup> सत्य बोलने का यह एक और लाभ होता है कि वह अनृतरूप पाप से बचकर दीक्षित हो जाता है, क्योंकि सत्य में ही दीक्षा प्रतिष्ठित है। स यः सत्यं वदति स दीक्षित ।<sup>२४</sup> सत्ये होव दीक्षा प्रतिष्ठिता ।<sup>२५</sup> दीक्षित व्यक्ति देवों को प्राप्त करता है अर्थात् देवत्व को प्राप्त कर देवों में एक हो जाता है। देवान्वा एष उपोत्क्रामति यो दीक्षते ।<sup>२६</sup> देवान् वा एष उपावर्तते यो दीक्षते स देवानामेको भवति ।<sup>२७</sup> दीक्षित व्यक्ति यजमान होने के साथ ही विष्णु हो जाता है अर्थात् विष्णु की भाँति सम्मान प्राप्त करता है- उभयं वा एषोऽत्र भवति यो दीक्षते विष्णुश्च यजमानश्च। यदह दीक्षते तद् विष्णुर्भवति ।<sup>२८</sup> इसलिए सत्य ही बोलना चाहिए। महर्षि

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जीवन पर्यन्त पूर्ण निष्ठा के साथ सत्य को दैनिक जीवन व्यवहार में क्रियान्वित किया। आर्यसमाज के प्रारम्भिक पाँच नियमों में सत्य को रखा। स्वामी जी महाराज ने सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में लिखा है। मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख के द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें। सत्योपदेश के बिना

अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।<sup>१९</sup> तैत्तिरीयारण्यक के अनुसार आचार्य अन्तेवासी=शिष्यों को वेदाध्ययन के पश्चात् समावर्तन संस्कार के समय अनुशासित करते हुए कहता है सत्य बोलना। धर्म का आचरण करना। सत्याचरण में, धर्माचरण में कभी प्रमाद मत करना- सत्यं वद धर्मम् चर। सत्यान् प्रमदितव्यम्। धर्मान् प्रमदितव्यम्।<sup>२०</sup> यह सब आचार्य इसलिए करता है कि सत्य ही, धर्म ही श्रेयस्कर है। इसीकारण ब्राह्मण ग्रन्थ व उपनिषद् सत्य को ब्रह्म कहते हैं और देव सत्य की उपासना करते हैं। सत्यं ब्रह्म सत्य ह्येव ब्रा<sup>२१</sup>

#### सन्दर्भः

१. महाभारत प्रजागरपर्व ३३ व ३४वाँ अध्याय
२. महाभारत भीष्मपर्व १८वाँ अध्याय
३. धातुपाठ २५८ अष्टाध्यायीसूत्रपाठ ३.२.१२४।
४. अष्टाध्यायीसूत्रपाठ ६.४.१११।
५. अष्टाध्यायीसूत्रपाठ ४.४.११०।
६. अष्टाध्यायीसूत्रपाठ ४.४.६८।।
७. अष्टाध्यायीसूत्रपाठ ६.१.२०७।५.४.६६।
८. निघण्टु १.१२।
९. निघण्टु ३.१०।
१०. यजुर्वेद १.५। ११.४७। १९.७२ से ७९ तक।

११. निरुक्त १.४.२।
१२. निरुक्त ३.३.१(१०)
१३. धातुपाठ १/४८ व ४८९। उणादिसूत्रपाठ ४/१४७
१४. अष्टाध्यायीसूत्रपाठ ६.१.१९१
१५. निघण्टु १.१२/२.७/२.१०
१६. निरुक्त. १.३.३
१७. उणादिसूत्रपाठ ४.१४७ पर दयानन्दवृत्ति
१८. सत्यार्थप्रकाश प्रथमसमुल्लास
१९. बृह ५.४.१ मा. श. ब्रा. १४.८.५.१ का श. ब्रा. १७.५.४.१
२०. छन्दोग्योपनिषद् ८.३.४
२१. भगवद्गीता १८.९१
२२. शां.आ. ११.६। तैत्तिरीयब्राह्मण ३.१०.८.९
२३. शाङ्खानारण्यक ११.१
२४. श्वेता ३.१३ ( कठोपनिषद् ६.१७। तु कठो. ४.१२
२५. श्वेताश्वतरोपनिषद्, ३.२०। कठोपनिषद् २.२०
२६. सत्यं ब्रह्मेति सत्य ह्येव ब्रह्म। का. श. ब्रा. १७.५.४.१। एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति। छ. उप. ८.३.४। मनो ब्रह्म। चक्षुर्ब्रह्म। गो. ब्रा. १.२.१० व ११। ब्रा.१.५। ब्रह्म वै प्रणवः। कौ.ब्रा.११.४ ब्रह्मवैप्रजापतिः। मा.श. ब्रा. १३.६.२.८ प्राणो वै ब्रह्म। मा. श. ब्रा. १४.६.१०.२। यश्चायमध्यात्मं शारीरस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मे दममृतमिदं ब्रह्मेदं सर्वम् मा. श. ब्रा. १४.५.५.१। बृ. २.५.१
२७. का. श. ब्रा. १७.५.५.१। मा. श. ब्रा. १४.८.६.१। बृ. उ. ५.५.१।
२८. का. श. ब्रा. १७.५.५.१ मा. श. ब्रा. १४.८.६.१। बृ. उ. ५.५.१
२९. छन्दोग्योपनि ८.३.५।
३०. का. श. ब्रा. १७.५.३.१ मा.श. बा. १४.८.४.१। बृहदारण्यकोपनिषद् ५.३.१
३१. ब्रह्म वा ऋतम्। मा. श. ब्रा. ४.१.४.१०। का. श. ब्रा. ५.१.४.८

३२. मा. श. ब्रा. ६.७.३.११  
 ३३. मा. श. ब्रा. ७.३.१.२३। १४.३.१.१८। तै. ब्रा.  
 ३.८.३.४।  
 ३४. ऐतरेयब्राह्मण ४.३.६  
 ३५. यजुर्वेद ११.४७  
 ३६. मा. श. ब्रा. ६.४.४.१०  
 ३७. मा. श. ब्रा. १०.४.१.५  
 ३८. कौ. ब्रा. ६.१ व ५। १२.८ मा. श. ब्रा. २.५.४.८।  
 ५.३.५.३२ तैत्तिरीय ब्राह्मण. ३.६.१६.३  
 ३९. मा. श. ब्रा. १.३.३.१९। का. श. ब्रा. २.३.२.१४  
 ४०. ऐ. ब्रा. ३.३.६  
 ४१. जैमिनीयोपनिषद् १.१०.२  
 ४२. मा. श. ब्रा. ४.३.२.१३। का. श. ब्रा. ५.३.३.९  
 ४३. यजुर्वेद ४०.१७  
 ४४. तै. आ. ७.८.१। तै. उप. १.८.१  
 ४५. मा. श. ब्रा. ९.५.१.१८  
 ४६. मा. शा. ब्रा. ६.३.३.१४  
 ४७. मा. श. ब्रा. ४.६.७.१.  
 ४८. जैमिनीयोपनिषद्ब्राह्मणे २.३.३.७। जै. उप. २.९.७  
 ४९. कौषीतकिब्राह्मण ६.१२।  
 ५०. मा. श. ब्रा. ६.११.८  
 ५१. ऐ. ब्रा. ५.५.७  
 ५२. का. श. ब्रा. १७.१.४.१४। मा. श. ब्रा.  
 १४.४.२.२६  
 ५३. मा. श. ब्रा. १२.८.२.४  
 ५४. मा. श. ब्रा. ३.४.२.८

५५. मा. श. ब्रा. १४.१.१.३३  
 ५६. यजुर्वेद १.५  
 ५७. मा. श. ब्रा. १.१.१.२। ३.२.२.२२। गोपथ ब्राह्मण  
 २.१.१४ काण्वशतपथब्राह्मण २.१.१.१  
 ५८. गो. ब्रा. २.१.१५  
 ५९. मा. श. ब्रा. १.१.२.१७। २.१.१.४। ३.३.२.२.।  
 ३.९.४.१ का. श. ब्रा. १.१.१.२  
 ६०. ऐ. ब्रा. १.१.६  
 ६१. को. ब्रा. २.८  
 ६२. मा. श. ब्रा. १.१.१.५। का. श. ब्रा. २.१.१.२  
 ६३. मा. श. ब्रा. २.२.२.१९  
 ६४. कौ. ब्रा. ७.३  
 ६५. मा. श. ग्रा. १४.६.९.२४  
 ६६. मा. श. ब्रा. ३.१.१.१  
 ६७. मा. श. ब्रा. ३.१.१.८ व ९  
 ६८. मा. श. ब्रा. ३.२.१.१७  
 ६९. सत्यार्थप्रकाश भूमिका  
 ७०. तैत्तिरीयारण्यक ७.११.१। तैत्तिरीयोपनिषद्  
 १.११.१  
 ७१. का. श. ब्रा. १७.५.४.१ मा. श. ब्रा. १४.८.५.१।  
 बृ. उप. ५.४.१।

हविर्धानम् रा. ३०. राजबाग, सूरसागर, जोधपुर  
 ३४२०२५

चलभाष : ९५१५३४३२६६/९५१३६१०९२८

## विद्या के कोष की रक्षा व वृद्धि राजा व प्रजा करें

वे ही धन्यवादार्ह और कृत-कृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सास, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्ट मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्ते। यही कोष अक्षय है, इसको जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाये, इस कोष की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी है। ( सत्यार्थ प्रकाश सम्मुलास ३ )



## धीमे पाँव

मुनि सत्यजित्

धीमे-धीमे वो आये, धीमे-धीमे वो जाये। धीमी गति से, धीमी आहट से। इतनी धीमे कि आरम्भ में पता ही न चले। न आने का, न जाने का। आते-आते भी आती नहीं दिखती, जाते जाते भी जाती नहीं दिखती। दिखते-दिखते भी देखी नहीं जाती, जानी नहीं जाती, पहचानी नहीं जाती। आती धीमे पाँव है, जाती भी धीमे पाँव है, किन्तु जमे पाँव। धीमे पाँव, जम के रखे जाते हैं। स्थिर जम के चलने वाले पाँव, धीमे पाँव बन ही जाते हैं। धीमा पाँव दिखाता नहीं है, अनदेखा सा रह जाता है। समझ कर रखा गया धीमा पाँव, न कि आलस्य व रोगग्रस्त धीमा पाँव। विवेक से रखा गया धीमा पाँव, न कि छलने के लिए चला गया धीमा पाँव।

बचपना जाये धीमे से। यौवन आये व जाये धीमे से। वार्धक्य भी आये धीमे से। बिना आहट, किन्तु जड़ें जमा कर, जड़ें पूरी उखाड़ कर। बचपन की उखड़ी जड़ें, फिर न लगें। यौवन आये तो जड़ जमा ले, जाये तो पूरी जड़ उखाड़कर, वार्धक्य की जड़ें मरे बिना न हटें। धीमे गये बचपन, धीमे आये यौवन को भी जानने समझने सम्भालने में देर हो जाती है। धीमे गये यौवन व धीमे आये वार्धक्य को सहने-झेलने की सामर्थ्य देर से ही आ पाती है। शरीर की गतियाँ भले ही तीव्र हों, पर अवस्था तो धीमे ही जाती आती है, बिना आहट। आ धमकने पर तो पता चल ही जाता है, पता न चले तो पता चलवा दिया जाता है। मन की गति की तीव्रता का कहना ही क्या, पर उससे भी बच कर, उसे आहट दिए बिना बचपन चला जाता है, यौवन आ जाता है, यौवन बीतकर वार्धक्य न जाने कब कैसे आ जाता है।

जीवन की तीव्र गतियों में रमे हम इन धीमी गतियों से अनभिज्ञ जीते चले जाते हैं। तीव्रता का उत्साह-उमंग, धीमे को लक्षित कैसे करे? धीमे आ रहे यौवन को

शीघ्र ले आने की अभीप्सा; धीमे जा रहे यौवन को और अधिक धीमा करने के प्रयास; धीमे आ रहे वार्धक्य को और धीमे आने की कामना। कितना भी करें, ये अवस्थाएँ आयेंगीं जायेंगीं, धीमे धीमे, धीमे पाँव। तन की धीमी अवस्था से मन की तीव्र गति का सामंजस्य बनाना धीरे-धीरे ही आ पाता है। मन की गति कितनी भी तीव्र हो मन का परिवर्तन, गुणान्तराधान, संस्कार धीरे ही होता है। परिवर्तन गुणान्तराधान संस्कार अच्छे हों या बुरे, आते धीरे-धीरे ही हैं। पौधा बढ़ता धीरे-धीरे है, दीमक भी लगती धीरे-धीरे है। अमरबेल बढ़ती धीरे-धीरे है, पादप सूखता भी धीरे-धीरे है। खाद पानी डल तो तेजी से जाते हैं, पर लगते-खपते धीरे-धीरे ही हैं। सूचना-ज्ञान प्राप्त तो वेग से हो जाता है, पर आचरण में धीरे-धीरे आता है।

चंचल प्रकाशशील मन में राग-द्वेष धीमे पाँव जड़ जमाने लगते हैं, जमाते रहते हैं। गतिशील जगत् के तीव्र व्यवहारों में ईर्ष्या-द्वेष पनपते धीरे-धीरे हैं। धन-पद-यश के पाने में अभिमान-स्वच्छन्दता धीरे-धीरे विकसित होते हैं। इनके आरम्भ को पकड़ पाना, समझ पाना आश्चर्यजनक है। धीमे पाँव, जमे पाँव आये ये कैसे हटें? समझने में लग जाती है देर। धीमे आते को देख लेंगे पश्चात्, धीमे का दम कम, धीमे को देखते कम। धीमे दबे पाँव आये ये, जाते भी धीमे-धीमे, जो जम के लगे, उसके ये हटते। हटाते-हटाते न हटते दिखते, जाते-जाते न जाते लगते। धीमे-धीमे जिन्हें जमने दिया, उन्हें उखाड़ने की अब त्वरा है। मन चला लें कितना भी, हटेंगे अपनी गति से, धीमी गति से। मन की तीव्रता तब क्या कर पाई थी, जब ये धीरे-धीरे धीमे पाँव आये थे? मन की बेचैनी-अधीरता-तीव्रता अब भी क्या कर पायेगी, धीमे हटते इन दोषों का?

शेष भाग पृष्ठ संख्या २७ पर...

## संस्था समाचार

प्रातः काल यज्ञोपरान्त प्रवचन के क्रम में रामनवमी के अवसर पर आचार्य कर्मवीर ने बताया कि आज हम मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का जन्मदिन मना रहे हैं। आजकल कुछ ईसाई, मुसलमान भी कह देते हैं कि हम भी राम के वंशज हैं। जो जाति अपने इतिहास को भुला देती है वह नाश को प्राप्त होती है? महर्षि वाल्मीकि ने महर्षि नारद से पूछते हैं कि कौन, वेदज्ञ, कृतज्ञ, नीतिज्ञ, गुणवान्, बुद्धिमान्, बलवान्, विद्वान्, धर्मात्मा, तेजस्वी हो पर क्रोध न करे, ईर्ष्यालु न हो आदि विशेषणों से युक्त कोई पुरुष हो तो आप हमें बताएं। ऐसा सुनकर विचार कर नारद जी ने बताया कि इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न श्रीराम ही हैं। जब श्रीराम पिताजी की आज्ञा से वन को जाते हैं। जब भरत अपने ननिहाल से वापस अयोध्या आते हैं। आने पता चलता कि श्रीराम वन चले गए। वे नगर के सभ्रान्त लोगों के साथ कुछ सैनिकों लेकर श्रीराम को वापस लाने की लिए वन जाते हैं। राम को राज्य लेने के लिए कहते हैं तब राम कहते हैं कि मैं पिताजी की आज्ञा से वन में आया हूँ। जब रावण के साथ युद्ध होता है। उस युद्ध में मेघनाथ ने लक्ष्मण को घायल कर दिया। तब रावण के वैद्य सुषेण को बुलाया जाता है और सुषेण वैद्य कहता है कि मैं शत्रु का वैद्य हूँ। मैं शत्रु का इलाज करूंगा क्या यह धर्म है तब राम कहते हैं यदि तुम्हें लगता है कि यह कार्य अधर्म है तो मैंने धर्म के लिए घर छोड़ा है और धर्म के लिए यदि भाई भी मर जाता है तो कोई चिंता की कोई बात नहीं। वैद्य का धर्म है रोगी की चिकित्सा करना। जब बाली को रामचन्द्र जी ने घायल कर दिया तो बाली ने कहा कि तुम्हारे सीता वापस आएगी इसका कोई निश्चित नहीं है। लेकिन यदि मुझे कहते तो मैं रावण से सीता को वापस ले करके तुम्हारे पास ले आता है। राम कहते हैं कि राम कभी अधर्मी से सहायता नहीं लेता और तुमने अपने भाई की पत्नी को

रख रखा है। अपने भाई को उसके अधिकार से वंचित कर रखा है। अधर्मी हो इसलिए बलवान् होने पर भी मैं तुम्हारी सहायता नहीं ले सकता। उसके बाद राम ने बाली को मारकर उसके पुत्र को वहां का राजा बनाया और रावण को मारकर भी विभीषण को वहां का राजा बनाया। राम भाइयों को साथ लेकर चलने वाले हैं। इस कारण आज भी श्री राम हमारे लिए आदरणीय, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम हैं।

आचार्य विद्यानन्द जी ने केन उपनिषद् के आधार पर बताया कि अग्नि, वायु आदि ने ब्रह्म को नहीं जाना पर इन्द्र जीव ने ब्रह्म को जान लिया। ऐसे जान लिया जैसे कि समीप से उसे छू लिया हो। इसलिए इन्द्र को श्रेष्ठ कहते हैं। उस ब्रह्म को जानने के लिए शारीरिक साधना तप और मानसिक साधना दम करने से सहन शक्ति आ जाती है। तप, विद्या, ब्रह्मचर्य और श्रद्धा के द्वारा अभ्यास को स्थिर कर सकते हैं। इस मार्ग में ऊपर की स्थिति को प्राप्त कर सकते हैं।

पूर्व सभामन्त्री श्री ओम मुनि जी ने स्वामी नित्यानन्द जी के विषय में बताया कि उनका जन्म राजस्थान में एक सामान्य परिवार में हुआ था वह पढ़ना चाहते थे। उनकी बुद्धि बहुत ही तीक्ष्ण थी। लेकिन घरवाले की आर्थिक स्थिति नहीं थी कि वह उसे काशी भेजकर पढ़ा सकें। एक दिन घर छोड़कर वह किसी तरह अहमदाबाद पहुंचते हैं। वहां एक जैन साधु से मिलते हैं जैन साधु को लगता है कि यह उत्तम बुद्धि का है। कहा कि मेरा शिष्य बन जाओ तुम्हें मेरा पद मिलेगा स्वामी जी मना कर देते हैं और घूमते घूमते काशी पहुंचे। वहां स्वामी दयानन्द जी के शिष्य श्री गोपाल गिरी जी सहयोग करते हैं और वह काशी में पढ़कर वेदों का विद्वान् बनते हैं। स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी से संन्यास लिया। स्वामी नित्यानन्द जी को शाहपुरा वाले ने अपना राजगुरु घोषित किया।

स्वामी जी नाहर सिंह जी के यहां दो महीने रह कर उन को पढाया। उदयपुर में सज्जन सिंह को पढाया। मात्र तिरपन वर्ष की उम्र में उनकी मृत्यु हो जाती है। उनकी स्मृति में पुष्कर रोड स्थित आर्यसमाज में यज्ञशाला का नाम उनके नाम पर रखा गया है।

भूतपूर्व मुख्य सचिव श्रीकान्त जी बाल्दी हिमाचल ने बताया कि स्वामी दयानन्द जी के साथ उनका जुड़ाव बचपन से रहा। उनके पिताजी उन्हें आर्यसमाज में लेकर आते थे। स्वामी दयानन्द जी ने जो सामाजिक कुरीतियां थी उनको दूर किया? महिलाओं को शिक्षित किया उनको सम्मान दिया। व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण हो तो तब समाज निर्माण होता है। छोटे बच्चों को जब अच्छे से कार्यक्रम में ले जाते हैं तो उनको उनका निर्माण होता है।

आचार्य रणजीत जी ने बताया कि हमें जीवन में तीन चीजें करनी चाहिए। प्रथम अपने जीवन के लिए ज्ञान की प्राप्ति। जिससे हम सत् असत् का विवेक कर सकें। आध्यात्मिक ज्ञान भी होना आवश्यक है। अपने लिए सर्वप्रथम ज्ञान की प्राप्ति करें। द्वितीय दूसरों के लिए सेवा कार्य करें। दूसरों की सहायता करें। इससे अंतःकरण की शुद्धि होती है। तृतीय ईश्वर की उपासना --- ईश्वर ने सृष्टि के सारे पदार्थ बनाकर हमें दे रखे हैं। उन पदार्थों का उपयोग करते हुए हम ईश्वर का धन्यवाद करें।

आचार्य शक्तिनन्दन जी ने हनुमान् जयन्ती के अवसर पर हनुमान् जी बंदर नहीं थे। इस विषय को स्पष्ट रूप से रखा। उन्होंने बताया कि जब सुग्रीव के सचिव हनुमान् भिक्षु भेष में राम-लक्ष्मण के पास आते हैं और उनसे संवाद करते हैं और जब वापस जाते हैं। तब राम-लक्ष्मण से कहते हैं कि यह चारों वेदों का पढ़ा हुआ और जिसके जीवन में चारों वेद हैं। व्याकरण के अनुसार एक भी वर्ण अशुद्ध नहीं बोला है?।

**भजन के क्रम में माता स्वर्णा सरीन जी ने गाया-** सृष्टि से पहले अमर ओम् नाम था अमर ओम्

नाम था आज भी है और कल भी रहेगा।

**दूसरा भजन श्री आदित्य मुनि जी ने गाया -** जीवन में तुम कभी भी ईश्वर को ना भुलाना तुम ओम् नाम जप कर जीवन सफल बनाना

**जन्मदिवस -** आर्यसमाज अजमेर के प्रधान श्री नवीन मिश्रा के सुपुत्र श्री गौरव मिश्रा व श्रीमती सुचित्रा मिश्रा ने सपरिवार वैवाहिक वर्षगांठ की आहुति देकर वैवाहिक वर्षगांठ मनाया। आचार्य कर्मवीर जी ने आशीर्वाद प्रदान किया।

**अतिथि यज्ञ के होता-** अजमेर निवासी श्री बाबूलाल चौहान ने प्रातः काल यज्ञ कर अपना जन्मदिवस मनाया श्री ओममुनि आदि जी ने आशीर्वाद प्रदान किया।

प्रातःकाल यज्ञ करके जन्मदिवस की आहुति दे कर सभा कर्मचारी श्री पृथ्वीराज जी की सुपुत्री सुश्री यशस्वी जी का जन्मदिन मनाया गया तथा साथ ही अतिथि श्री चन्द्र प्रकाश जी के सुपुत्र श्री आदित्य जी का जन्म दिवस भी मनाया गया। आचार्य रणजीत जी आदि ने आशीर्वाद दिया।

- ज्ञानचन्द्र

### पृष्ठ संख्या २५ का शेष भाग...

शुभ विचार-संस्कार-भावनाओं का जमना भी तो धीरे-धीरे है। जब ये आते तो जड़ जमा कर आते। इनके साथ जुड़ी हमारी कामना, इन्हें उखड़ने नहीं दे सकती। इनके सामने अशुभ विचार-संस्कार-भावना टिक नहीं सकते, भले ही जायें धीमे पांव। धीमे पांव जाते ये उखड़ेंगे भी जम कर। ऐसे कि कभी जमे ही न हों। धीमे पांव की महिमा न्यारी, साधकों को है प्यारी। धीमे पांव की ध्वनि दूसरों को सुनती नहीं, दूसरों को सुनानी भी नहीं, स्वयं सुनने की आवश्यकता ही नहीं। बढ़ते पैर प्रत्यक्ष हैं हमें, ध्वनि से अनुमान क्यों करें? बढ़ते पैर परोक्ष हैं उन्हें, ध्वनि से अनुमान वे करें तो करें। धीमे पांव, धैर्य के पांव। धैर्य है पिता, हितकारी है परमपिता के समान। धीमे पांव, शान्ति के पांव। धीमे पांव, अपने पांव, अपने लिए पांव, जम कर रखे पांव।

( परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित )  
**योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर**  
( स्वामी विष्वङ्गी परिव्राजक के सान्निध्य में )

संवत् २०८०, आषाढ कृष्ण अष्टमी से अमावस्या तक, तदनुसार ११ से १८ जून २०२३

इस योग-साधना शिविर में योग सम्बन्धी विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

**प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन**

१. प्रत्येक शिविरार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
३. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
४. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
५. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
६. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
७. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
८. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।
९. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

**प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ-** परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५-२९४८६९८, मो. ९३१४३९४४२१) से सम्पर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार अतिरिक्त भुगतान से की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गम्भीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर

देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने-पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क २००० रु. मात्र जमा करना होगा। पृथक् कक्ष का शुल्क २००० रु. अतिरिक्त देय है। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारम्भ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है, क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबंधी महत्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

**मन्त्री**, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर **दूरभाष** : ०१४५-२९४८६९८, मो.नं. ९३१४३९४४२१  
- : मार्ग : -

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुँचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टैण्ड से ( वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा ) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

## आर्यवीर एवं आर्य वीरांगना श्रेणी का प्रशिक्षण शिविर

स्थान - ऋषि उद्यान, अजमेर, राजस्थान

आर्य वीर दल शिविर - दिनांक - १४ से २१ मई २०२३ तक

आर्य वीरांगना दल शिविर - दिनांक - १९ से २५ जून २०२३ तक

सभी आर्य वीरों व वीरांगनाओं को नमस्ते। आप सभी को सूचित किया जाता है कि आर्य वीर व आर्य वीरांगना श्रेणी का प्रशिक्षण शिविर ऋषि उद्यान अजमेर में आयोजित किया जाएगा।

**शिविर की विशेषता** - १- शिविर आर्यवीर दल अजमेर एवं परोपकारिणी सभा अजमेर के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित होगा। इसमें राष्ट्रीय स्तर के शिक्षकों द्वारा प्रशिक्षण दिया जाएगा।

२- शिविर में सहयोग राशि ५००/- रुपये रहेगी।

३- सभी को गणवेश में रहना अनिवार्य होगा। गणवेश यदि उपलब्ध नहीं है तो शिविर स्थल से क्रय कर सकते हैं।

४- इस शिविर में सैनिक शिक्षा का विशेष प्रशिक्षण होगा।

५- आर्य वीर शिविर स्थल पर १३ मई २०२३ व आर्य वीरांगना शिविर में १८ जून २०२३ को रात्रि तक आना अनिवार्य है।

६- शिविर में भाग लेने वाले आर्य वीर अपनी आने की सूचना श्री कमलेश पुरोहित को चलभाष संख्या ९८२८१८०१९७ एवं आर्य वीरांगना की सूचना श्रीमती सुलक्षणा शर्मा को चलभाष संख्या ९४१३६९५४८९ पर अवश्य देवें। धन्यवाद।

विश्वास पारीक-जिला संचालक-९४६००१६५९०

**आर्य वीर दल एवं आर्य वीरांगना दल अजमेर**

**परोपकारिणी सभा, अजमेर**

परोपकारी

वैशाख शुक्ल २०८० मई ( प्रथम ) २०२३

२९

## परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्य पर

पुस्तक का नाम	पृ. सं.	वास्तविक मूल्य रुपये	छूट के साथ मूल्य रुपये
ऋग्वेद संहिता	९००	५००	४००
अथर्ववेद संहिता	५५०	४००	३००
ऋग्वेद भाष्य नवम भाग	४००	३००	२२५
पञ्चमहायज्ञ विधि	६२	२०	१५
वैदिक संध्या मीमांसा	१०७	४०	३०
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	१३९२	८००	५००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	३३६	२००	१००
कुल्लियाते आर्यमुसाफिर (दोनों भाग)	९३८	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	८१४	५००	२५०

यजुर्वेद भाष्य ( महर्षि दयानन्द सरस्वती ) पृष्ठ संख्या- २१९७, चार भागों का मूल्य = १३००/-  
डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = १०००/-

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-दूरभाष - 0145-2460120, चलभाष - 7878303382



VEDIC PUSTKALAYA

0510800A0198064

1342679A

0510800A0198064.mab@pnb

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली  
पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाताधारक का नाम - वैदिक पुस्तकालय, अजमेर

(VEDIC PUSTKALAYA,  
AJMER)

बैंक का नाम - पंजाब नेशनल बैंक,  
कचहरी रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-

0008000100067176

IFSC - PUNB0000800

UPI ID :

0510800A0198064.mab@pnb

### विद्या के कोष की रक्षा व वृद्धि राजा व प्रजा करें

वे ही धन्यवादार्ह और कृत-कृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सास, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्ट मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्ते। यही कोष अक्षय है, इसको जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाये, इस कोष की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी है। (सत्यार्थ प्रकाश सम्मुलास ३)

## परोपकारी ग्राहकों हेतु आवश्यक सूचना

परोपकारी के अनेक सदस्यों की यह शिकायत रहती है कि उन्हें पत्रिका प्राप्त नहीं हो रही है। रजिस्टर्ड डाक से पत्रिका भेजने पर डाक व्यय बढ़ जाता है। सदस्यों से निवेदन है कि जो रजिस्टर्ड डाक से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं, वह निम्नानुसार डाक व्यय सभा के खाते में अग्रिम रूप से जमा करके कार्यालय को सूचित कर दें। रजिस्टर्ड डाक का व्यय (पत्रिका शुल्क के अतिरिक्त) निम्न प्रकार है-

- |   |                     |
|---|---------------------|
| १. प्रत्येक अंक (वर्ष भर २४ अंक) रजिस्टर्ड डाक से मंगाने पर | - डाक व्यय - १०००/- |
| २. एक मास के दो अंक- एक साथ मंगाने पर वार्षिक               | - डाक व्यय - ५००/-  |
| ३. एक वर्ष के २४ अंक- एक साथ मंगाने पर                      | - डाक व्यय - १००/-  |

### बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-10158172715

IFSC-SBIN0031588

email : psabhaa@gmail.com

सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961

## गुरुकुल प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषिउद्यान, अजमेर में संस्कृत भाषा, पाणिनीय व्याकरण, वैदिक दर्शन, उपनिषदादि के अध्ययन हेतु प्रवेश आरम्भ किये गए हैं। इन्हें पढ़कर वैदिक विद्वान्, उपदेशक, प्रचारक बन सकते हैं। कम से कम दसवीं कक्षा उत्तीर्ण १६ वर्ष से बड़े युवकों को प्रवेश मिल सकता है। प्रवेशार्थी को पहले ३ माह का अस्थाई प्रवेश दिया जाएगा। इस काल में अध्ययन व अनुशासन में सन्तोषजनक स्थिति वाले युवकों को ही स्थाई प्रवेश दिया जाएगा। सम्पूर्ण व्यवस्था निःशुल्क है। गुरुकुल में अध्ययन के काल में किसी भी बाहर की परीक्षा को नहीं दिलवाया जाएगा, न उसकी अनुमति रहेगी। प्रवेश व अधिक जानकारी के लिए-

चलभाष : ७०१४४४७०४० पर सम्पर्क कर सकते हैं। सम्पर्क समय- अपराह्न ३.३० से ४.३०।

## शुल्क वृद्धि की सूचना

परोपकारी के पाठकों बड़े भारी मन से सूचित करना पड़ रहा है कि कागज के मूल्य और छपाई के अन्य साधनों के मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि के कारण जनवरी 2023 से सदस्यता शुल्क बढ़ाना पड़ रहा है। बढी हुई दरें इस प्रकार से हैं -

भारत में

एक वर्ष	-	400/-	पांच वर्ष -	1500/-
आजीवन (20 वर्ष)-		6000/-	एक प्रति -	20/-

परोपकारी

वैशाख शुक्ल २०८० मई ( प्रथम ) २०२३

३१

## संस्था की ओर से....

**क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते? तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये**

वैदिक नित्यकर्मों में पञ्चमहायज्ञ अवश्य करणीय कर्म हैं। इन्हीं में से एक है- अतिथि यज्ञ। प्रत्येक गृहस्थ के लिए अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और वह राशि एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल/आश्रम में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय। इस राशि को प्रदान कर सभा के माध्यम से अतिथि यज्ञ सम्पन्न कर सकते हैं।

सभा की योजना के अनुसार प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी होता सदस्यों में अंकित किया जाता है, ऐसे सज्जनों के नाम परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक/सभा के खाते में ऑनलाइन द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी ( आयकर की धारा ) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

*अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि, जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे, तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।*

### अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा दें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। राशि जमा करने के पश्चात् दूरभाष द्वारा कार्यालय को अवश्य सूचित करें। दूरभाष - 8890316961

### परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-10158172715

IFSC-SBIN0031588

email : psabhaa@gmail.com

सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961



## दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

( १६ से ३१ मार्च २०२३ तक )

१. वरोनिका शास्त्री, अजमेर २. श्री प्रकाश किशोर खन्ना, अजमेर ३. श्री शशिप्रेम, अजमेर ४. श्री सूर्यप्रकाश आर्य, नागौर ५. श्री सूरज जग्गा, नीदरलैण्ड ६. आर्यसमाज रोहिणी, दिल्ली ७. श्रीमती किरण देवी, जोधपुर ८. डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ९. श्रीमती सूर्या देवी, नई दिल्ली १०. सजना शर्मा, अजमेर ११. उन्नति, अजमेर १२. श्री दिनेश नवाल, अजमेर १३. श्री मुमुक्षु मुनि, अजमेर १४. श्री के.सी. शर्मा, अजमेर १५. सुश्री अरुणा गौड़, अजमेर।

### गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गोशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

### ऋषि-उद्यान में संचालित गोशाला के दानदाता

( १६ से ३१ मार्च २०२३ तक )

१. तुलिका कृष्ण कुमार साहू, विलासपुर २. श्री राजेश त्यागी, अजमेर ३. डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली, अजमेर ४. सजना शर्मा, अजमेर ५. श्री मनुभाई शान्तिलाल शाह, बड़ौदा ६. प्रेमलता दुग्गल, सूरत ७. श्रीमती शान्ति देवी चौहान, अजमेर।

### अन्य प्रकल्पों हेतु सहयोग राशि

१. श्री सुबोध मुनि व श्री चन्द्रसेन हरिसिंघानी, अहमदाबाद २. श्री विपिन कुमार, दिल्ली ३. सुमित्रा कालड़ा, गुरुग्राम ४. श्री दीपक नागपाल, गुरुग्राम ५. श्री दिनेश नागपाल, गुरुग्राम ६. श्री श्रवण कुमार मटेजा, गुरुग्राम ७. श्री पुरखराज सोनी, अजमेर ८. श्री कमलेश डूड, गुरुग्राम ९. श्री धर्मवीर गाबा, हरियाणा १०. महर्षि दयानन्द शोधपीठ, अजमेर ११. आचार्य कर्मवीर, अजमेर १२. श्रीमती स्वर्णा, अजमेर १३. मै. महर्षि एन्टरप्राइजेज सारणी, बैतुल।

### परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम

०१.	आर्य वीर दल शिविर	-	१४ से २१ मई-२०२३
०२.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	११ से १८ जून-२०२३
०३.	आर्य वीरांगना दल शिविर	-	१९ से २५ जून-२०२३
०४.	दम्पती शिविर	-	२४ से २७ अगस्त-२०२३
०५.	डॉ. धर्मवीर स्मृति दिवस	-	०६ अक्टूबर-२०२३
०६.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	२९ अक्टूबर से ०५ नवम्बर-२०२३
०७.	ऋषि मेला	-	१७, १८, १९ नवम्बर-२०२३

कृपया शिविर में भाग लेने के इच्छुक शिविरार्थी पूर्व से ही प्रतिभाग की सूचना दें।

# ‘सत्यार्थ प्रकाश’ एवं ‘महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र’ प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत अमर ग्रन्थ ‘सत्यार्थप्रकाश’ ने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति ‘वैचारिक क्रान्ति’ को जन्म दिया। अतः परोपकारिणी सभा ने ७ वर्ष पूर्व ‘विश्व पुस्तक मेला’ दिल्ली में प्रतिवर्ष ‘सत्यार्थप्रकाश’ के साथ ‘महर्षि का जीवन-चरित्र’ एवं ‘आर्याभिविनय’ पुस्तक का वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है।

एक सैट की छपाई का खर्च लगभग १५० रु. आता है। ५०० से कम प्रतियों पर स्टिकर लगाकर तथा ५०० या अधिक प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित किया जाएगा।


१५० रु. प्रति सैट के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं।

अपने दान के साथ ‘सत्यार्थप्रकाश वितरण’ अवश्य लिख दें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	३०००/- रु.
	३० प्रतियाँ	४५००/- रु.
	५० प्रतियाँ	७५००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	१५०००/- रु.
	५०० प्रतियाँ	७५०००/- रु.
	१००० प्रतियाँ	१,५०,०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी राशि दूरभाष संख्या के साथ भेज दें। धन्यवाद।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर



योनो SBI SBI Payments

MERCHANT NAME : PROPKARNI SABHA  
UPIID : PROPKARNI@SBI

SCAN & PAY

BHIM  
SBI Pay  
BHIM UPI

## सभा प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

### बैंक विवरण

खाताधारक का नाम  
परोपकारिणी सभा, अजमेर  
(PAROPKARINI SABHA AJMER)

बैंक का नाम  
भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-  
**10158172715**  
IFSC - SBIN0031588

UPI ID : PROPKARNI@SBI



ऋषि उद्यान अजमेर में यज्ञ एवं उद्घोषन देते श्रीकान्त बादली (भूतपूर्व मुख्यसचिव- हिमाचल प्रदेश)



भारत के प्रसिद्ध शिक्षण संस्थान मेयो कॉलेज, अजमेर में आचार्य कर्मवीर आर्य (व्यवस्थापक- ऋषि उद्यान, अजमेर) के ब्रह्मत्व में यज्ञ का आयोजन

आर जे/ए जे/80/2021-2023 तक

प्रेषण : ३० अप्रैल २०२३

आर.एन.आई. ३९५९/५९

अनन्य ईश्वर भक्त, योगेश्वर  
**महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती**  
की

२०० वीं जयन्ती के अवसर पर  
परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा आयोजित

दिव्य एवं भव्य  
अन्तर्राष्ट्रीय ऋषि मेला

१७-२० अक्टूबर २०२४

**सादर आमन्त्रण**

प्रेषक:

परोपकारिणी सभा  
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,  
अजमेर ( राजस्थान ) ३०५००१

सेवा में,

पत्रक लिफ्ट